C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

हिंदुओं के

व्रत, पर्व और त्योहार

[शास्त्रीय विधियाँ, महात्म्य् तथा लोक कथाएँ]

संपादक

सन्तोष कुमार

मुख्य वितरक—

प्रभात-पब्लिशिंग हाउस

नयागांव, लखनऊ

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

प्र क ा श क
जयतोष प्रकाशन
ल ख न ऊ

प्रथम संस्करण १९६१
मूल्य तीन रुपया

मु द्र क
फाइन प्रेस
ल ख न ऊ

HINDUON KE VRAT PARV AUR TYOHAR PRICE Rs. 3

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

विषय-क्रम

आप ही से !	१	धन-तेरस	८१
यह क्या हैं ?	२	दीपावली	८३
नववर्ष प्रतिपदा	५	अन्नकूट	८९
नवरात्र-दुर्गा-पूजन	६	यमद्वितीया (भैया दूज)	९१
गणगौरी (गनगौर-व्रत)	१९	गोपाष्टमी	९८
राम-नवमी	२६	देवोत्थापिनी एकादशी	९९
गंगा दशहरा	३०	कार्तिक पूर्णिमा	१०१
नाग-पंचमी	३८	संकटा चौथ	१०५
श्रावणी और रक्षा-बंधन	४०	मकर-संक्रान्ति	१०८
जन्माष्टमी	४४	बसंत-पंचमी	१११
हरतालिका-व्रत (तीज)	४९	महाशिवरात्रि व्रत	११४
गणेश चतुर्थी	५४	होलिकोत्सव	१२१
ऋषि-पंचमी	६४	एकादशियों के व्रत	१२५
अनंत चतुर्दशी	६७	प्रदोष व्रत	१२९
पितृपक्ष	७१	सातो वारों के व्रत	१३२
विजय दशमी	७४	सत्यनारायण-व्रत	१३९
शरत् पूर्णिमा	७६	पुरुषोत्तम मास	१४४
करवा चौथ	७७	सोमवती अमावस्या	१४६
अहोई अष्टमी	७९	कुम्भ-पर्व	१५०

आवाहन-पूजनादि के मंत्र १५४

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

हमारे उत्कृष्ट प्रकाशन

१. प्रश्न (उपन्यास)–सर्वदानंद वर्मा	३.५०
२. समस्या (उपन्यास)-देवीप्रसाद धवन	३.००
३. मणिमाल—रवीन्द्रनाथ टैगौर	२.५०
४. ज्योति-कणिकाएँ (Fire-Flies) रवीन्द्रनाथ टैगोर	३.००
५. बलाका लेखक ,,	२.००
६. प्रतिमा (हास्य)--संतोषनारायण नौटियाल	२.००
७. रामायण की अंत:कथाएँ—(दो भाग) सीतादेवी	२.००
८. भारतीय नेताओं का बचपन--राममोहन	१.२५
९. विश्व की लोक-कथाएँ—रामगोपाल	१.२५
१०. बाल-मनोरंजन—संतोषकुमार	०.५०
११. पुरुखों की सीख ,,	०.५०
१२. किससे कैसे बर्तें (शिष्टाचार)—स्वर्ण भार्गव	०.३७
१३. घर का दवाखाना—श्रीमती जयजयवन्ती	०.५०
१४. लड़कियों का खेल—स्व० गिरिजाकुमार घोष	१.००
१५. राना बेनीमाधव (बालोपयोगी)—'अमरेश'	१.५०
१६. Cream of General Knowledge	5.00
१७. रस-छंद-अलंकार-परिचय--श्रीदिनकर	१.२५
१८. व्यवधान (उपन्यास)--अनंतगोपाल शेवड़े	५.००
१९. गरजती गंगा ,, --डॉ० सत्यनारायण	३.००
२०. खूँखारों के बीच ,, ,,	४.००
२१. तुषार-कन्या ,, ,,	२.००
२२. नागिनी ,, --चंद्रकुँवर वर्त्वाल	२.००
२३. विश्व-इतिहास की झाँकी–श्रीचतुर्वेदी	४.५०
२४. मानो न मानो (विश्व वैचित्र्य)	५.००
२५. अमर वेदना (सत्य की खोज में) श्री सांकृत्यायन	२.५०
२६. उदयाचल (काव्य)—शम्भूनाथसिंह	२.००
२७. छायालोक ,, -- ,,	२.००
२८. जीवन का सत्य (उपन्यास)—भीष्म आर्य	१.५०
२९. भारत निर्माता (३ भाग)--कृष्ण वल्लभ	१५.००
३०. अर्द्ध वृत्त (उपन्यास)--अनंत प्रसाद	१.५०
३१. विद्यापति की पदावली (संक्षिप्त)--बहुगुना	२.००
३२. द्वंद समास–भगवती प्रसाद	२.००

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

आप ही से !

त्यौहार व्रत और पर्व निरन्तर हममें प्राचीन संस्कारों का समावेश करते रहते हैं हमें अपने प्राचीन संस्कृति की याद दिलाते रहते हैं। यह एक प्रकार से नए समाज को प्राचीन संस्कृति में ढालने के सांचे हैं। ऐसे अमूल्य साँचे जो हमारे जीवन को ही बनाते हैं, हम कैसे भुला सकते है ? आप भी इनसे अछूते नहीं हैं तब आप ही क्यों इनके बारे में जानने से वंचित रहें ? त्योहार, व्रत, पर्व क्या हैं, यह प्रायः सभी जानते हैं। यह क्यों और कैसे मनाए जाते है, जानने की अभिलाषा सभी को होती है। आप भी इन्हें सरलता-पूर्वक जान लें इसीलिए इन्हें पुस्तकरूप दिया गया है। न केवल धार्मिक प्रेरणा से वरन इस उत्कंठा से कि जिस समाज में हम रह रहे हैं उसका स्वरूप क्या है, रीति रिवाज क्या है, रीतिरिवाजों का आधार क्या है आदि को जानने के लिये आप इसे पढ़े-त्रुटि सुधार में हमारा पथ प्रदर्शन करें।

बादाम की खोल में जो कुछ भी भरा है बहुत न होते भी पूर्ण है। यहाँ हमने भी यहीं चेष्टा की है कि प्रसंग लम्बा चौड़ा न होते भी पूर्ण हो। यदि कोई कमी फिर भी रह गई प्रतीत हो जो नितान्त आवश्यक समझें, हमारी प्रार्थना है आप हमें अवश्य बतायें। अक्सर लोग निवेदन या भूमिका पढ़ते ही नहीं है और जो पढ़ते भी है वह निवेदन की प्रार्थना पर विशेष ध्यान नहीं देते। इत्तफाक से कोई विचार पुस्तक-सम्बन्ध में आया भी तो उसे आलस्य या किसी और कारण से प्रकाशक तक पहुँचाने का कष्ट नहीं करते ऐसी कोई बात हमारी प्रार्थना के लिये न होनी चाहिए। धन्यवाद ! कृपया पृष्ट उलटिये।

प्रकाशक—

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

यह क्या हैं ?

त्योहार का ही दूसरा नाम है उत्सव। वर्ष भर में निश्चित तिथियों पर पौराणिक अथवा लोक कथाओं पर आधारित उत्सव मनाये जाते हैं। यह वह उत्सव हैं जिनको सम्पूर्ण समाज एक साथ मनाता है। सामाजिक बन्धनों तथा रोज-मर्रा की एक सी कार्य प्रणाली के कारण मानव जीवन नीरस हो जाता है और मनुष्य इससे उब जाता है। इसीलिये लौकिक जीवन को सरस बनाने व मनोरंजन हेतु त्यौहारों का विधान किया गया है। कुल परम्परागत इनके मनाने में विभिन्न विशेषतायें रहती हैं पर पूजन-विधि आदि बहुत कुछ एक-सा रहता है। यह समाज को एकता में बांधने की कड़ी तथा ईश्वर को निरंतर कराते रहने के स्मरण हैं।

व्रत एक प्रकार का संकल्प है जो प्रत्येक मानव किसी उद्देश्य अथवा कामना से करता है। हालाकि कामना रहित व्रत का महात्म्य अधिक है फिर भी आधुनिक युग में ऐसा व्रत कहीं भी दिखाई नहीं देता। आजकल व्रत का अर्थ उपवास से लगाया जाता है। शास्त्रानुसार उपवास का अर्थ दुर्गुणों एवं दोषों से बचकर आत्मा अथवा गुणों के साथ वास करना है अर्थात पाप अथवा कलुषित भावनाओं से मुक्त होकर चित्त वृत्तियों को आत्मा अथवा सद्गुणों में ठालने की प्रेरणा ही उपवास है। यानी आजकल लोग उपवास से भोजन अथवा किसी अन्न विशेष का ग्रहण न करना समझते हैं। धर्म शास्त्रों में व्रत अथवा उपवास में भोजन त्यागने की जो व्यवस्था की गई है उसका कारण हैं कि मनुष्य अपने

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

उदर-पूर्ति एवं जीभ के चटोरपने में इतना लिप्त हो जाता है कि वह आत्मा तथा परमात्मा को बिलकुल ही भूल जाता है और सद्गुणो से अनेकों कोस दूर जा गिरता है। किसी भी व्रत को धारण करने के लिए निर्लिप्तता की बड़ी आवश्यकता होती है। यह निर्लिप्त भोजन त्यागने से ही प्रारंभ होती है हमारे जन नायक गांधी जी ने भी व्रतों का अर्थ हमें समझाया है। वह स्वंय दो प्रकार के व्रत किया करते थे। मौन व्रत में पूरे दिन के लिये वाणी का त्याग करते थे तथा उपवास वाले दिन कुछ न खाते थे।

पर्व के माने है गांठ। जैसे बांस या ईख में समान दूरी पर गांठ होती है इसी प्रकार समय की समान दूरी पर पर्व होते हैं। पर्व किसी मुख्य तिथि या ज्योतिष गणना के अनुसार ग्रहों की विशेष स्थिति पर जिसका संयोग किसी निर्दिष्ट समय में होता है घूम फिर कर बराबर आते हैं। जैसे कुम्भ पर्व आदि। वैसे सारे व्रत और त्योहार भी पर्व हैं क्योंकि यह समय चक्कर के निर्धारित अंक हैं। लेकिन इनकी लौकिकता तथा मान्यता अलग-अलग है।

त्योहार व्रत और पर्व मानने मनाने के लिए इनमें पूर्ण आस्था का होना आवश्यक है। बिना जल के जलाशय सूखा उसी तरह बिना आस्था के त्योहार व्रत और पर्व असम्भव है। आस्था से विश्वास और विश्वास से श्रद्धा पैदा होती है। श्रद्धा ही से आत्मीयता तथा प्रेम जागृत होते हैं, जो लगन उत्साह तथा उमंग हममें भरते हैं। बिना इन तीनों के किसी भी कार्य को करना असम्भव है। त्योहार व्रत और पर्व का सम्बन्ध एक ऐसी शक्ति से है जो अदृश्य है। जो दिखाई न

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

दे, सुनाई न दे महसूस न हो उसके लिए आस्था को प्राप्त करने में कल्पना तथा धारणा का आसरा लेना पड़ता है। कल्पना में तर्क हो सकता है पर धारणा में हम सत्य असत्य के तर्क को छोड़कर जो ठीक समझते हैं और जो हमें ठीक बताया जाता है उसे मान लेते हैं और इसी मान्यता में हम आस्था रखते हैं।

लेखक—

लखनऊ
होलिकोत्सव सं० २०१६

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

१. नववर्ष प्रतिपदा

नववर्ष, हिन्दु ज्योतिष की आधुनिक प्रचलित परम्परा के अनुसार चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से आरंम्भ होता है। पुराण के अनुसार सृष्टि-प्रारंभ भी इसी तिथि पर हुआ है। वैसे कहीं-कहीं कार्त्तिक अथवा फाल्गुन से भी लोग नववर्ष का आरंभ मानते हैं। ज्योतिष के अनुसार जिस दिन चैत्र-शुक्ल प्रतिपदा होती है, वही ग्रह वर्ष का राजा होता है। अर्थात् प्रतिपदा यदि मंगलवार को हुई तो मंगल ग्रह वर्ष भर सर्वशक्ति मान रहेगा। आज ही के दिन से आदि शक्ति दुर्गा-पूजा का भी अनुष्ठान आरंभ होता है।

विधिः—अपने घर को तोरण-बंदनवार से सजाकर कलश स्थापना तथा ध्वजा रोपण करके पूजा का मंगल कार्य आरंभ करना चाहिए ब्रह्मा काल देवता, कुल देवता, ग्राम देवता आदि का पूजन करके दोनों लोको में सुख-शांति स्थापन-हेतु तथा नूतन वर्ष निर्विघ्न आनंद-पूर्वक व्यतीत करने की मंगल कामना करनी चाहिए। दान विशेष कर पंचांग दान महत्वपूर्ण है। ज्योतिषी पंडितों को पंचांग दान करके वर्षफल तथा राशि फल सुनें।

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

२. नवरात्र-दुर्गा-पूजन

भारत कृषि-प्रधान देश है। यहाँ की चैती तथा कुआरी दो प्रमुख फसलें हैं। फसलों के कटने पर देश में खुशी की लहर दौड़ जाती है और कृषि उपज की रक्षा के लिये आदि शक्ति नव दुर्गा का पूजन, महोत्सव होता है। इसी लिये नवरात्र वर्ष में दो बार आता है। जहाँ चेती की प्रधानता है, वहाँ चैत्र नवरात्र तथा जहाँ कुवारी की प्रधानता है वहाँ आश्विनी नवरात्र विशेष रूप से मनाया जाता है।

शक्ति-पूजा के लिये शुक्ल पक्ष की रात्रि नियत की गई है इसी से इसका नाम नवरात्र पड़ा। इसमें आदि शक्ति दुर्गा के नौ रूपों, (१) शैल पुत्री (२) ब्रह्मचारिणी (३) चन्द्र घन्टा (४) कुष्मांडा (५) स्कन्द माता (६) कात्यायिनी (७) काल रात्रि (८) महागौरी तथा (९) सिद्धिदात्री का नौ रात्रियों में प्रतिपदा से नवमी तक पूजन-आवाहन होता है। दुर्गा सप्तशती में संपूर्ण पूजन विधि तथा पाठ दिया है।

विधिः—प्रतिपदा को घट स्थापित किया जाता है। प्रातः काल स्नानकर नवरात्रि-व्रत का संकल्प करें तथा गणपति-पूजन, पुण्याह-वाचन, मातृका पूजन और ऋत्विक वरण करने के बाद पृथ्वी का स्पर्श करके पूजन करें। घट में आम के पत्ते डालकर जल भरें और चंदन लगाकर सर्व औषधि दूर्वा, पंचरत्न पंचपल्लव घट में डालें तथा उस पर सूत या वस्त्र लपेटे। घट के मुँह पर गेहूँ या जौ से भरा पात्र रखकर वरुण का पूजन करे और तब भगवती का आवाहन करें।

भगवती का आवाहन करके आसन, वाद्य, अर्थ, आचमन पंचामृत, स्नान, वस्त्र, अलंकार, गंध, अक्षत, पुष्प आदि द्रव्यों से पूजन करके अंग-पूजन करना चाहिए। तत्पश्चात् धूप,

0-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

दीप, नैवेद्य, आचमन, ताम्बूल, पूगी फूल, दक्षिणा, आरती और पुष्पांजलि करके प्रदक्षिणा करें और ऋत्विक् वरण करके कुमारी-पूजन करना चाहिए। एक वर्ष की आयु से लेकर १० वर्ष तक की कन्या का पूजन करना उचित है।

प्रतिपदा से लगाकर दशमी तक कन्या का पूजन करना चाहिए। देवी नवरात्रि के पूजन का सब को अधिकार है। सात्विक लोगों की पूजा मांस-रहित तथा तामसी लोगों की पूजा मांस-सहित होती है। घट स्थापित करने के बाद दशमी तक नित्य सप्तशती का पाठ देवी-भागवत्-श्रवण, अखंड दीप, पुष्पमाला समर्पण और उपोषण करना या एकभुक्त रहना चाहिए। घट के पास नौ धान्यों को बोना चाहिए और अन्त में पौधों का प्रसाद लेकर मस्तक पर चढ़ाना चाहिए। पंचमी के दिन उद्यङ्ग ललित व्रत करें। मूल नक्षत्र में सरस्वती का आवाहन करके पूर्वाषाढ़ में पूजन करे। उत्तराषाढ़ में बलिदान और श्रवण में विसर्जन करे। अष्टमी और नवमी को महा-तिथि कहते हैं। यदि संभव हो तो इस दिन यज्ञ कराना चाहिए तथा कन्याओं को जिमाना चाहिप। दशमी को दुर्गामूर्ती तथा पूजन नवैद्यादि विसिर्जत कर दें।

कथा

प्राचीन काल में एक धर्मात्मा और प्रजा-पालक सुरथ नाम का राजा था। वह राज-काज का भार मंत्रियों को सौंप कर इंद्र के समान राज-सुख का उपभोग करने लगा। यह देखकर उसके शत्रुओं ने इस अवसर से लाभ उठाया और उसके राज पर चारों ओर से चढ़ाई कर दी। इधर मंत्री लोग भी राजा को धोखा देकर शत्रुओं से मिल गए। परिणाम

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

यह हुआ कि राजा सुरथ का राज चला गया, मंत्रियों का ईमान गया, राज्य पर शत्रुओं का अधिकार हो गया और राजा तपस्वी के वेश में वनवास करने लगा।

एक दिन राजा ने देखा, एक अति वृद्ध व्यक्ति रोता हुआ जंगल में मारा-मारा फिरता है। राजा ने उससे पूछा—"तुम किस कारण यहाँ विलाप कर रहे हो ?"

उसने उत्तर दिया—"मैं समाधि नाम का वैश्य हूँ। गृहस्थाश्रम में मैं धन-धान्य संपन्न और परिवार-संपन्न हूँ, परंतु बुढ़ापा मुझे व्याधिरूप हो गया है। मेरे ही पुत्र-पौत्रों ने मुझे बेकार समझकर घर से निकाल दिया। किंतु मेरा मन उन्हीं में लगा हुआ है।

यह सुनकर राजा बोला—यह तो मोह की प्रबलता है।

वैश्य पुनः बोला—यह मैं भी जानता हूँ फिर भी मन के वेग से विवश हूँ।

राजा सुरथ उस मोह-ग्रस्त वैश्य को लेकर मेघ ऋषि के पास गए। ऋषि ने पूछा—तुम दोनों कौन हो ? और क्यों उदास और परेशान से फिरते हो ?"

राजा ने कहा—"मैं राजा हूँ, और यह वैश्य है हम दोनों को भाइयों ने घर से निकाल दिया है। लेकिन हम उनके मोह को छोड़ नहीं पाते।"

ऋषि ने कहा—"राजन् ! मन शक्ति के अधीन होता है। उस आदि-शक्ति भगवती के दो स्वरूप हैं—एक विद्या और दूसरा अविद्या। विद्या ज्ञान-स्वरूप है अविद्या अज्ञान-स्वरूप। इसी अविद्या के कारण मोह उत्पन्न होता है। इसी अविद्या के कारण मनुष्य अन्धा होकर स्वयं मोह माया में बँधा हुआ मरता-जीता रहता है। जो पुरुष भगवती को संसार का आदि-कारण जानकर उनकी भक्ति करते हैं, उन्हें वह विद्या-स्वरूप

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

से प्राप्त होकर उन्हें जीवन्मुक्त कर देती हैं।"

राजा ने पूछा—"हे मुनिवर! अब कृपाकर यह बतलाने की कृपा कीजिए कि शक्ति की उत्पत्ति कहाँ से हुई? और उसका वास कहाँ है?"

ऋषि ने कहा—"नित्यानंद-स्वरूप शक्ति की उत्पत्ति और उसका नाश नहीं होता। वह अनादि और अनंत है। जब देवताओं पर संकट पड़ता है, तभी वह किसी-न-किसी रूप में प्रकट होती हैं। उसी शक्ति के माहात्म्य की कथा मैं बताता हूँ, उसे ध्यान देकर सुनो।

"महाप्रलय के समय जब श्रीलक्ष्मीनारायण शेष-शय्या पर क्षीर-सागर में शयन कर रहे थे और उनका प्रताप निद्रा के स्वरूप में उनके शरीर में व्याप्त हो रहा था, उसी दशा में उनकी नाभि से ब्रह्मा प्रकट हुए और दोनों कानों से मधु और कैटभ नाम के दो दैत्य उत्पन्न हुए। उन दोनों का भयंकर वेश देखकर ब्रह्मा ने विचार किया कि इस समय श्रीहरि के सिवा और कोई मेरा सहायक नहीं। परन्तु यह सुषुप्त अवस्था में हैं। इनको किसी तरह जगाना चाहिए। यह विचार कर ब्रह्मा ने समस्त जग की प्रेरक आदि-शक्ति का ध्यान करते हुए उनकी स्तुति की। तब सर्वेश्वरी शक्ति ने अपनी वह मोहक शक्ति खींच ली, जिसके कारण विष्णु भगवान् सो रहे थे। विष्णु ने जागकर उक्त दोनों दानवों से युद्ध करना आरंभ किया। पाँच हजार वर्ष तक घोर युद्ध होता रहा। परन्तु उन खलों का बल कुछ भी कम नहीं हुआ। देवताओं ने घबराकर शक्ति की आराधना की, जिस पर शक्ति ने वाणी-शक्ति के द्वारा स्वयं असुरों से कहलाया—"हे हरि! अब तुम हमें जंघाओं पर सिर रखकर मार डालो।"

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

विष्णु भगवान् ने वैसा ही किया। उनका सिर चक्र से काट डाला।

यह एक प्रसंग हुआ। अब जिस तरह से इन्द्रादि देवताओं के लिये शक्ति प्रकट हुई, उसका हाल सुनो--

"एक समय महिषासुर नाम का एक असुर ऐसा प्रबल हुआ कि उसने स्वर्ग के सब देव-दल को परास्त करके इन्द्र के निवास-स्थान को जा घेरा। इन्द्र उसके डर से भागकर त्रिदेवों के पास गये। इन्द्र समेत त्रिदेवों ने आदि-शक्ति भगवती का ध्यान किया। उसी क्षण सब देवताओं के अंगों में से एक तेज-पुञ्ज ज्वाला-सी निकलकर अग्नि-ज्वाला की तरह पृथ्वी पर आच्छादित हो गई। उस तेज संतप्त होकर देवताओं ने शक्ति की स्तुति करते हुए प्रार्थना की—"हम लोग यह आपका तेज सहन नहीं कर सकते। इस कारण कृपा करके आप मूर्तिमान् स्वरूप धारण कर लीजिए।"

यह सुनते ही एक सुंदर किशोर-वय मूर्ति प्रकट हो गई। उस मूर्ति के तीन नेत्र व आठ भुजाएँ थीं। सब देवताओं ने उस मूर्ति की पूजा की। विष्णु भगवान् ने अपना चक्र उसे समर्पण किया। ब्रह्मा ने अपना पवित्र कमंडलु और शिवजी ने त्रिशूल दिया। इन्द्र ने अपना वज्र दान किया। वरुण ने शक्ति-आयुध दिया। यमराज ने अपना खड्ग और यम-फाँस दी। अग्निदेव ने अपना धनुष-बाण दिया। लक्ष्मी ने अपना सब शृंगार उसको दिया और हिमालय ने उसकी सवारी के लिए सिंह भेंट किया। इस प्रकार से सुसज्जित होकर इधर से शक्ति चली उधर से महिषासुर दैत्य अग्रसर हुआ। शक्ति के साथ जो देवताओं का दल था, उसको पीछे छोड़कर शक्ति भवानी आगे बढ़ गईं और उसने महिषासुर के अगवान दैत्य-दल पर भीषणरूप से आक्रमण किया और देखते-देखते उसने

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

संपूर्ण दैत्य दल का नाश कर डाला। महिषासुर अकेला रह गया। वह अनेक आसुरी माया करता हुआ युद्ध में प्रवृत्त हुआ। परंतु शक्ति ने संपूर्ण माया-जाल को छिन्न-भिन्नकर महिषासुर को कालपाश में लपेटकर पृथ्वी पर पटक दिया और उसकी गर्दन पर पैर रखकर खड्ग से उसका सिर काट डाला। इस प्रकार भगवती ने महिषासुर का संहार किया। अब आगे जिस तरह शुंभ-निशुंभादि दैत्यों को मारा, उसकी कथा कहता हूँ, सो सुनो—

"श्री सूर्य भगवान् की अदिति नाम की रानी के गर्भ से शुंभ और निशुंभ नाम दो दैत्य उत्पन्न हुए। ज्येष्ठ भाई शुंभ राज-छत्र धारणकर दैत्य-समाज का शासन करता था और उसका छोटा भाई निशुंभ भी समान रूप से बलवान् और सामर्थ्यवान् था। जीवधारी की कौन कहे, पञ्चतत्व, अग्नि, जल, नभ, वायु आदि उनके भय से सशंक रहते थे। ऐसे ही उनका प्रधान कर्मचारी रक्तबिन्दु और सेनापति धूम्र-लोचन कार्य-कुशल और कुशाग्र-बुद्धि थे। सेनापति के सहकारी चंड और मुण्ड नाम के दैत्य बड़े विकट-स्वरूप और अजेय योद्धा थे। इन लोगों के आतंक से समस्त देवदल छिन्न-भिन्न हो गया। विष्णु कई बार इन दैत्यों से परास्त हो रणक्षेत्र छोड़कर भाग गए थे। उन्होंने ब्रह्मा का हंस छीन लिया, दिग्पालों को क़ैद कर लिया, कुबेर का भंडार लूट लिया और देवताओं से सुमेरु शिखर छीनकर उस पर अपना अधिकार जमा लिया। यहाँ तक कि इन्होंने सूर्य, चंन्द्र, शेषनाग इत्यादि सृष्टि के प्रधान स्तंभों पर अपना प्रभुत्व स्थापित करके उनको अपना आज्ञाकारी बना लिया।

"इस आपत्ति से अकुलाकर त्रिदेवों-समेत संपूर्ण देवता हिमालय पर्वत पर पार्वतीजी की स्तुति और वंदना करने लगे।

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

उन्होंने शक्ति के माहात्म्य और वैभव का वर्णन करते हुए कहा—भगवती ! जिस प्रकार आपने मधु-कैटभादि असुरों का संहार किया, उसी प्रकार शुंभ-निशुंभ दोनों को भी मारकर हमारा उद्धार कीजिए।"

देवता-वृन्द इस प्रकार स्तुति कर रहे थे, उसी समय पार्वती जी स्नान करने के लिये निकलीं। देवताओं को इकट्ठा देख उन्होंने पूछा--"आप लोग यहाँ एकत्र होकर किस अभिप्राय से किस की स्तुति कर रहे हैं ?"

पार्वतीजी के इतना कहते ही उनके मुख से एक अनुपम शक्ति निकली। उसके निकलते ही गौरांगी पार्वती का स्वरूप श्याम वर्ण हो गया। उस शक्ति ने पार्वतीजी के सम्मुख स्थित होकर कहा—"यह देवता असुरों के भय से विह्वल होकर मेरी स्तुति कर रहे हैं। इसी कारण, हे गौरी ! मैं स्वयं-सिद्ध प्रकट हुई हूँ ?"

देवता लोग उस स्वयं-सिद्ध शक्ति का अनुपम-स्वरूप देख कर चकित हो गए। और वे किंकर्तव्य विमूढ़ होकर उसके चरणों पर गिर पड़े। भगवती ने उनको आश्वासन देते हुए कहा--"तुम लोग पर्वत की गुफाओं में छिप रहो, तब तक मैं संपूर्ण दैत्य-दल का नाश किए देती हूँ।"

देवताओं के छिप रहने पर वह आदि-कुमारी अद्भुत स्वरूप धारणकर सुमेरु शिखर के राज-सिंहासन पर आसीन होकर असुर-दल के अनुचरों को यहाँ से मारकर निकाल बाहर करने लगीं। यह समाचार पाकर असुरराज शुंभ-निशुंभ आश्चर्य में पड़ गए। उन्होंने वास्तविक स्थिति जानने के लिये जो गुप्तचर भेजे, वे भी आदि-शक्ति का दिव्य स्वरूप देखकर मोहित हो गए। उन्होंने अपने राजा से कहा--"महाराज ! सुमेरु-शिखरवासिनी तपस्विनी अवश्य ही श्रीमान् की सेवा में

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

आने के योग्य हैं।"

इस पर दैत्यराज ने भगवती के पास एक राजदूत भेजा। उसने देवी के दरबार में जाकर अद्भुत चमत्कार देखा। आदि-शक्ति के अलौकिक रूप-लावण्य को देखकर नज़र नीची करके खड़ा रह गया। तब देवी ने उसको बैठने का आदेश करते हुए मंद मंद मुस्कराते हुए। पूछा—"कहो, तुम इधर कैसे भूल पड़े।

यह सुनकर दूत बोला—"मैं दैत्यराज शुंभ का भेजा हुआ आप ही की सेवा में आया हूँ। आपके रूप गुण की चरचा सुनकर वह आप पर मोहित हो गए। अस्तु, आप कृपा कर उनके पास चलिए और सर्वश्रेष्ठ पट-रानी के पद पर प्रतिष्ठित होकर तीनों लोकों का राज्य कीजिए और अपनी तपस्या का प्रत्यक्ष फल लीजिए।"

दूत की ऐसी बातें सुनकर भगवती ने उत्तर दिया—"संसार में ऐसा कौन है, जो मेरा पति बन सके। हाँ, यदि कोई मुझको युद्ध में जीत सके, तो उसे पति-भाव से अंगीकार कर सकती हूँ।"

यह सुनकर दैत्य-दल का दूत क्रोध-पूर्वक बोला—"हे देवि, आपका यह गर्व व्यर्थ है। क्या आप उन शुंभ-राज को नहीं जानतीं, जिन्होंने संपूर्ण देव-दल को परास्त कर दिया है? ब्रह्मा, विष्णु आदि सब देवता जिनके भय से कंदराओं में छिपे हैं, उस सबल का एक अबला क्या कर सकती है? इस बात को खूब सोच-समझ कर मेरे साथ चलो, और जीवन के सुख भोग करो। क्यों व्यर्थ उन महाराज के तेज-प्रताप का पतंगा बनने का साहस करती हो?"

यह सुनकर भगवती ने दूत को समझाया—"मैं तेरी सब बातें समझती हूँ, परंतु मैंने युद्ध-स्वयंवर का प्रण किया है।

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

अस्तु, तू अपने राजा से ऐसा ही कह दे।"

दूत ने जगजननी के आदेशानुसार सब बातें शुंभ से कह सुनाइ, जिसे सुनते ही शुंभ ने धूम्रा को बुलाकर आज्ञा दी—"तुम दस हजार योद्धा लेकर कैलाश पर जाओ और उस तपस्विनी कन्या को पकड़ लाओ। यदि कोई उसकी सहायता करे, तो उसको उचित दंड देकर उसके केश पकड़ लाओ।"

धूम्रा सुमेर-शिखर के पास पहुँच अपनी सब सेना को नीचे छोड़ स्वयं शिखा पर चढ़कर भगवती के सम्मुख जा पहुँचा। वह देवी के दरबार का चमत्कार देखकर चकित हो गया। उसको ऐसा देख भगवती ने पूछा—"तू ऐसे क्यों मूर्ख की तरह खड़ा है?"

धूम्रा बोला—"तूने जो हमारे महाराज के दूत से युद्ध-स्वयंवर की बात कही थी, उसी के अनुसार मैं तुझको पकड़ने के लिये आया हूँ।"

इतना सुनते ही शक्ति ने आप ही आप एक हुंकार शब्द किया। उसकी दाह-शक्ति से धूम्रा उसी जगह जलकर भस्म हो गया। धूम्रलोचन का भस्मीभूत होना सुनकर उसके साथ वाले दानव शिखा पर चढ़ दौड़े। यह देखकर शक्ति ने उनके ऊपर सिंह को ललकार दिया और सिंह ने उन सबका सर्वनाश कर दिया।

सिंह का ग्रास होने से जो बचे, वे लोग शुंभ के दरबार में जा पुकारे। उनसे आदि-शक्ति के प्रभुत्व एवं वैभव का समाचार सुनकर शुंभ ने सहायक सेना-नायक चंड-मुंड को आज्ञा दी कि वे एक विकट दानव-दल ले जाकर शक्ति को पकड़ लाए। तद्नुसार चंड-मुंड एक बड़ी भारी दैत्य-सेना लेकर हिमाचल की ओर चल पड़ा। उसके दल के आतंक से सारे देश में हाहाकार मच गया। भगवती ने भी एक ओर भयंकर दैत्य-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

दल और एक ओर अकेले सिंह को देखकर क्रोध-पूर्वक जो भौंहें चढ़ाईं, तो क्रोध-स्वरूप, कराल-कृत्यशक्ति काली अपने आप उत्पन्न हो गई। उस तामस-स्वरूप मूर्ति का सर्वाङ्ग श्याम वर्ण था। उसके बड़े-बड़े काले बाल एड़ियों तक छिटके हुए थे। उसकी दोनों विकट भृकुटियों के ऊपर ललाट पर से अद्वितीय तेज प्रदीप्त हो रहा था। उसके दाँत और जिह्वा अति भयानक थीं। उसके सर्वांग के रोम-रोम खड़े थे और उसके आजानु अनेक अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित थे। उसका भयानक शरीर रुधिर चूते हुए गजचर्म से आच्छादित था और वह नर-मुंडों की माला पहने हुए थी।

उसने आदिशक्ति के चरणों में प्रणाम करके अपनी प्रेत, पिशाच और योगिनी सेना समेत दानव-दल पर आक्रमण कर दिया। भगवती काली की भयानक मूर्ति देखकर दैत्य-दल तो सशंक होकर किंकर्त्तव्य-विमूढ़ हो गया, परंतु चंड-मुंड ने साहस कर कालिका का सामना किया। उसने काली पर जो-जो अस्त्र शस्त्र चलाए, सब व्यर्थ हुए। अंत में काली ने अपने विकराल खड्ग से चंड-मुंड के शरीर के खंड-खंड कर दिए और वह उसका रुधिर पान करने लगी।

"भूत-प्रेत वैतालादि से बचे हुए दैत्य काली के हाथों चंड-मुंड का परिणाम देखकर राजा के समीप दौड़े गए। चंड-मुंड का मरना सुनकर शुंभ दुःख, क्रोध, लज्जा और भय से विह्वल-सा हो गया। अस्तु, उसने अपने अमात्य रक्तविंदु को आज्ञा दी कि वह संपूर्ण दैत्य दल-समेत शक्ति का संहार करने के लिये सुमेरु-शिखर पर आक्रमण करे। आज्ञा शिरोधार्य करके रक्त-विंदु असंख्य सेना समेत सुमेरु-शिखर के उपकंठ में जा पहुँचा। दैत्य-दल को देखकर शक्ति भगवती ने विचार किया कि अकेली काली इन सबको कहाँ तक मारेगी। चित्त में ऐसा

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

विचार होते ही भगवती के मुख से जाज्वल्यमान ज्वाला-स्वरूप शक्ति की उत्पत्ति हुई। उस आदि-शक्ति का प्रबल शक्ति से हंसवाहिनी ब्रह्मशक्ति, गरुड़ारूढ़ विष्णुशक्ति, नंदीवाहिनी शिव शक्ति और गजारूढ़ इंद्रशक्ति आदि संपूर्ण देवताओं की भिन्न-भिन्न शक्तियाँ आप-से आप प्रकट हो गईं। उन्होंने आदि शक्ति को सिर नवाकर आज्ञा माँगी। शक्ति ने शत्रु-सेना पर आक्रमण करने की आज्ञा दी।

जगजननी की आज्ञा पाकर संपूर्ण देवों की दिव्य शक्तियों ने दैत्य-दल का संहार करना आरंभ किया। विभिन्न देव-शक्तियों की संयुक्त मार से घबराकर जब दानव-दल भाग उठा, तो रक्तबीज ने क्रुद्ध हो अति उद्धत योद्धाओं-समेत ताजी फ़ौज को रण-क्षेत्र में भेजा। खास तौर से हाथियों की फ़ौज आगे करके उसने विकट व्यूह-बद्ध हो आक्रमण किया। उस समय भगवती ने संपूर्ण विभिन्न शक्तियों की एकत्र शक्ति एक इंद्र-शक्ति में भर दी। उसने अपने वज्रायुध से समस्त दानव सेना को छिन्न-भिन्न कर दिया। संपूर्ण पदाति दानव-सेना हाथियों की रेल-पेल से आप ही पद-दलित होकर भाग उठी। केवल इने-गिने सरदार खेत में खड़े रह गए। तब तो रक्तबिंदु स्वयं अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों से सजकर युद्ध-क्षेत्र में पहुँचा। उसमें खास गुण यह था कि जहाँ कहीं उसके रुधिर का एक बूँद गिर पड़ता, वहीं एक नवीन रक्तबिंदु (दानव) उत्पन्न हो जाता था।

उसकी इस अलौकिक करामात के सामने समस्त देश-शक्तियाँ स्वयं परास्त हो गईं। तब सब देवताओं ने व्याकुल होकर अनन्य शक्ति की आराधना की। उसी समय उनकी इच्छा से कालिका शक्ति अपनी योगिनी सेना समेत अग्रसर हुई। उसने अपने खड्ग से उस दानव का सिर काट डाला

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

और योगिनियों ने उसका रुधिर पीना आरंभ किया। तात्पर्य यह कि रक्तबीज के किसी अंश का एक भी बिंदु धरती में गिरने ही न पाया। अंत में भगवती की काली शक्ति ने असली रक्तबिंदु को भी मार डाला।

रक्तबिंदु का मरना सुनकर शुंभ को अति क्षोभ हुआ। अपने बड़े भाई का मन मलीन देखकर निशुंभ ने महाशक्ति का सामना करने का बीड़ा उठाया, और वह संपूर्ण चतुरंगिनी सेना-सहित सुमेरु शिखर की ओर चढ़ चला। उसके मुक़ाबले में संपूर्ण देव-शक्तियों ने अतुल पराक्रम दिखाया, परंतु उसके माया-जाल के आगे सभी को नत मस्तक होना पड़ा। अंत में श्रीकालिका-शक्ति ने उसके सम्मुख होकर उसे ललकारा। दोनों में घोर युद्ध होने लगा। निशुंभ ने शक्ति पर सब प्रकार के आयुध चलाए, परंतु वे सब निष्फल हुए, और भगवती ने उस प्रबल दैत्य की देह को खंड-खंड कर डाला। भाई का रण में मरण सुनकर शुंभ स्वयं आदि-शक्ति से युद्ध करने के लिये रण-क्षेत्र में आया। उसने भी अपने प्रबल पराक्रम से देव-सेना को व्याकुल कर दिया; परंतु अंत में उसकी भी वही गति हुई, जो सब दानवों की हो चुकी थी।

ऋषि बोले—"हे राजन्! ऐसी अनन्य शक्ति-संपन्न भगवती आदि-शक्ति की आराधना से मनुष्य-मात्र के सब क्लेश दूर हो सकते हैं।"

तब राजा सुरथ बोला—"हे ऋषिवर! किस प्रकार आराधना करके आदि-शक्ति को प्रसन्न करना चाहिए, सो कृपा कर वह भी समझाइए।"

इस पर ऋषि ने ऊपर कहे अनुसार भगवती की आराधना की संपूर्ण विधि बताई। राजा सुरथ और समाधि वैश्य दोनों ऋषि का उपदेश अंगीकार करके एक निर्जन वन में नदी के

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

तट पर विधिवत् भगवती की आराधना करने लगे। लगातार तीन वर्ष की तपस्या के बाद भगवती ने प्रकट होकर राजा और वैश्य से कहा—'जो चाहते हो, सो वर माँगो।"

राजा ने कहा—"हे भगवती! आपकी कृपा से मेरा गया हुआ राज पुनः प्राप्त हो जाय।"

और वैश्य ने वर माँगा—'मेरा मोह दूर हो जाय।'

भगवती 'एवमस्तु' कहकर अंतर्ध्यान हो गईं।'

वैश्य को तो उसी समय ज्ञान प्राप्त हो गया, और वह संसारी मोह से निवृत्त होकर आत्म-चिंतन में प्रवृत्त हो गया। राजा ने येन-केन-प्रकारेण कुछ मनुष्यों को जोड़कर अपने राज्य पर चढ़ाई की, तो अब आस-पास के सब लोग उसकी सहायता के लिये स्वयं उसकी सेना में आ मिले। उधर भगवती की कृपा से उसके शत्रुओं को वह सेना बड़ी भयानक और अजेय दीख पड़ने लगी, जिससे वे स्वयं भयभीत हो राज-सीमा को छोड़कर भाग गए।

सुरथ ने राज-सिंहासन पर बैठकर अपने राज में यह ढिंढोरा पिटवाया—'आश्विन-मास व चैत्र-मास के शुक्ल-पक्ष में प्रत्येक मनुष्य घट-स्थापन-पूर्वक आदि-शक्ति की उपासना तथा आराधना किया करे।"

उसी समय से संसार में नवरात्रि की पूजा की प्रथा चली है।

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

३. गणगौरी या गनगौर-व्रत

वर्तमान काल में यह व्रत गनगौर के नाम से प्रसिद्ध है, और चैत्र शुक्ल पक्ष की तृतीया को रक्खा जाता है। राजस्थान-विशेषकर मारवाड़ का यह एक राष्ट्रीय पर्व है। पुराणों एवं अन्य आचार-ग्रंथों में इसे गौरी-उत्सव के नाम से बताया गया है, और केवल सौभाग्यवती स्त्रियों के लिये ही इसका विधान है।

इसके अनुष्ठान की विधि संक्षेप में इस प्रकार है—चैत्र शुक्ल पक्ष की तृतीया के दिन सौभाग्यवती स्त्रियों को मध्याह्न तक व्रत रखना चाहिए। उस दिन बालू की गौरी की प्रतिमा बनाकर उसे सौभाग्य-सम्बन्धी सभी वस्तुएँ चढ़ानी चाहिए। जैसे—चूड़ी, महावर, सिन्दूर, नवीन वस्त्र, चन्दन, अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्यादि। पूजन के बाद भोग लगाया जाता है, और तब गनगौर की कथा कही जाती है। कथा की समाप्ति होने पर गायन वादन के साथ सौभाग्यवती स्त्रियाँ गौरी को समर्पित सिन्दूर अपनी माँग में लगाती और एक बार भोजन करके व्रत की समाप्त करती हैं। गनगौर में चढ़ाया हुआ प्रसाद बालकों अथवा पुरुषों को नहीं दिया जाता।

किन्तु इस शास्त्रीय विधि के अतिरिक्त मारवाड़ में, जहाँ इस व्रत का विशेष चलन है, कुछ लौकिक रीतियाँ भी की जाती हैं। मारवाड़ की कन्याएँ चैत्र कृष्ण प्रतिपदा अर्थात् होलिकोत्सव के दिन प्रातःकाल गाते-बजाते अपने-अपने घरों से निकलती हैं, और होलिकादहन की राख ले जाती हैं। उसी राख में गोबर मिलाकर आठ गोलियाँ बना ली जाती हैं, और चौकी पर रखकर आठ दिनों तक उनका पूजन करती हैं। फिर कुम्हार के यहाँ से बरतन बनाने की मिट्टी लाकर

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

शिव-पार्वती की मूर्तियाँ बनाकर उनका पूजन करती हैं। चैत्र शुक्ल तृतीया को उपर्युक्त रीति से इस व्रत को समाप्त कर नीचे दी हुई कथा सुनाती हैं।

कथा

एक बार शिवजी ने लोक-भ्रमण की इच्छा से नारदजी के साथ जब अपने आश्रम से बाहर जाने की तैयारी की, तब पावतीजी ने भी उनके साथ चलने का आग्रह किया। निदान नारद और पार्वतीजी के साथ शिवजी लोक-भ्रमण करते हुए एक गाँव में पहुँचे। उस दिन चैत्र शुक्ल पक्ष की तृतीया थी, जिसमें शिव-पार्वती की पूजा का महत्त्व बताया जाता है। उस गाँव के लोगों ने जब सुना कि हमारे यहाँ साक्षात् शिव-पार्वती का देवर्षि नारदजी के साथ शुभागमन हुआ है, तो उनकी प्रसन्नता का वारापार न रहा। गाँव की कुलीन स्त्रियाँ षोडशोपचार पूजन की विविध सामग्रियों की तैयारी कर भोग तैयार करने की शीघ्रता में ही थीं कि निर्धन नीच कुलों की स्त्रियाँ हल्दी-चावल थाली में रखकर उत्साह के साथ पूजन करने दौड़ पड़ीं। यही नहीं, जिनके पास हल्दी-चावल जुटाने की क्षमता न थी, वे केवल श्रद्धा के प्रसून लेकर ही चल पड़ीं। उन ग्राम्य बालाओं की प्रेम-भरी पूजा प्राप्त कर पावती प्रसन्नता से झूम गईं और उन्होंने संपूर्ण सुहाग-रस अर्थात् रोली अथवा हल्दी का टीका उन स्त्रियों के ऊपर छिड़क दिया, और इस प्रकार वे अखंड सौभाग्य पाकर, निहाल होकर लौट गईं।

कुलीन महिलाएँ तब तक अपनी तैयारी में ही थीं। उन निर्धन कुलोत्पन्न स्त्रियों के चले जाने के बाद बड़े ठाट-बाट से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

वे पार्वतीजी के समीप पहुँचीं। उनके हाथों में स्वर्ण और चाँदी के विविध पकवानों से सजाए गए थाल थे, जिनमें पूजन की मोहक सामग्रियाँ थीं। उन्हें इस रूप में आते देखकर शिवजी ने पार्वतीजी से कहा—"गौरि ! तुमने तो संपूर्ण सौभाग्य-रस उन निर्धन ग्राम बालाओं में वितरित कर दिया, तुम्हारे पास तो अब कुछ भी नहीं बचा। भला बताओ, तुम इन कुलीन स्त्रियों को क्या प्रसाद दे सकोगी ?"

पार्वतीजी ने मुस्किराकर उत्तर दिया—"आप इसकी चिंता क्यों करते हैं ? उन स्त्रियों को साधारण पदार्थों का सौभाग्य रस दिया है, इसलिये उनका सौभाग्य बाहरी अर्थात् केवल वस्त्र से रहेगा, किन्तु मैं इन लोगों को अपने शरीरस्थ रक्त का सौभाग्य-रस प्रदान करूँगी, जिससे ये सब तन-मन से मेरी ही भाँति अखंड सौभाग्यवती रहेंगी।"

पार्वतीजी ने कुलीन स्त्रियों की सविधि पूजा से प्रसन्न हो अपनी उँगली चीर उसके रक्त से उन सबका अभिसिंचन किया, जिससे वे उन्हीं की भाँति अक्षय सौभाग्यवती बन गईं। उन स्त्रियों के चले जाने पर पार्वतीजी ने शंकरजी से उनके पूजन की आज्ञा प्राप्त की और नदी-तट पर जाकर शिवजी के पूजन का विधान किया। नदी के पवित्र जल में स्नान कर पार्वतीजी ने उसी की बालू से शिवजी की प्रतिमा बनाली और पूजन की समस्त वस्तुएँ समर्पित कीं। बालू के ही पकवान थे, और बालू के ही नैवेद्यादि भी। शिवजी का ध्यान कर, भोग समर्पित करने के लिये शिव-प्रतिमा की पार्वतीजी ने भक्ति के साथ परिक्रमा की, नदी-तट की मिट्टी का तिलक लगाया, और स्वयं बालू के कणों का प्रसाद ग्रहण किया। इन सब कार्यों में पार्वतीजी को काफ़ी देर लग गई। जब वह शिवजी के पास पहुँचीं, तब उन्होंने इतनी देर होने का कारण

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

पूछा। पार्वतीजी ने परिहास में बताया कि वहाँ उनके नैहर के लोग भाई-भावज सभी आ गए थे, इसी कारण देर हो गई।

शिवजी पार्वती की चतुरता-भरी वाणी सुनकर मुस्किराए। फिर पूछा—"तुमने पूजन के बाद क्या-क्या प्रसाद चढ़ाया, और स्वयं क्या खाया ?"

पार्वतीजी थोड़ा सकुचीं। फिर बोलीं—"मेरी भावजों ने खीर बनाई थी, उसी को हमने नैवेद्य बनाया था, और उसी को स्वयं भी खाया था।"

यह सुन शिवजी गंभीर होते हुए बोले—"तुम्हें तो ऐसा नहीं चाहिए था। क्या मुझे छोड़कर तुम्हें अकेले ही भाई-भौजाइयों के यहाँ भोजन करना उचित था ? अच्छा, यदि खा ही लिया है, तो मुझे भी अपने साले और सलहजों से मिलना है, और खीर खानी है। चलो, वहीं चलें।"

अब तो पार्वतीजी घबरा उठीं। उन्हें कुछ सुझाई नहीं पड़ रहा था कि क्या करें। अनेक बहाने बनाए, किंतु शिवजी क्यों मानने लगे। वह उठकर उसी ओर चले, जिधर से पार्वतीजी लौटी थीं। पार्वतीजी भी शिव के पीछे-पीछे उनके विराट् स्वरूप का ध्यान करते हुए चल पड़ीं, और मन-ही-मन उनसे यह प्रार्थना करने लगीं—"हे नाथ ! यदि मैं आपकी अनन्य दासी होऊँ, तो आप मेरी लज्जा की रक्षा करें।"

शिव और नारद के साथ पार्वतीजी थोड़ी ही दूर आगे गई होंगी कि उन्हें विविध राजभवन दिखाई पड़ने लगे। राज-नगरों, जैसे सरोवर, उपवन और उद्यानों की छटा दिखाई पड़ने लगी और कुछ दूर आगे जाने पर उनकी ससुराल के लोग भी दिखाई देने लगे। उन लोगों ने अपने बहन-बहनोई पार्वती-शंकर का विधिवत् स्वागत समादर किया, और दो दिनों तक खूब आतिथ्य किया। तीसरे दिन पार्वतीजी बिदा

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

होने को जब तैयार हुईं, तो शिवजी ने अभी दो-चार दिन और रुकने का संकेत किया। पार्वतीजी भीतर से भयभीत थीं कि कहीं हमारी पोल खुल न जाय। अतः वह तुरंत चलने पर अड़ गईं शिवजी को पार्वती के दुराग्रह पर झुकना पड़ा, और नारद तथा पार्वती के साथ वह अपने विश्राम-स्थल की ओर वापस चल पड़े। मध्य मार्ग में आकर उन्होंने बताया कि "मेरी माला तो ससुराल ही में छूट गई। अब उसे किस प्रकार मँगाया जायगा ?"

पार्वतीजी ने झट उत्तर दिया—"मैं स्वयं जाकर आपकी माला लिए आती हूँ, आप लोग यहीं रुक जायँ।"

शिवजी ने आपत्ति की। उन्होंने कहा—"इस भयंकर वन में तुम भला अकेली कैसे जा सकोगी ? चलो, हम सब साथ चलेंगे।"

किंतु पार्वतीजी को यह क्योंकर स्वीकार होता ? उन्हें इसमें संदेह होने लगा कि कहीं हमारे भेद को प्रकट करने के लिये ही तो प्रभु ने यह उपाय नहीं किया है ! वह इस पर सहमत नहीं हुईं कि शिवजी पुनः माला लेने के लिये ससुराल वालों के यहाँ वापस जायँ।

अंततः नारदजी माला लेने के लिये तैयार हो गए और विवश हो पार्वती को इसके लिये सहमत होना पड़ा। नारदजी ने जाकर देखा कि जहाँ कुछ पहले मनोहर राजभवन तथा उद्यान थे, एवं पार्वतीजी के भाई एवं भौजाई विराजमान थे, वहाँ घनघोर जंगल है, और बड़े-बड़े हिंस्र पशु निर्भय होकर घूम रहे हैं। बड़ी कठिनाई से उन्हें शिवजी की उक्त माला एक वट वृक्ष की डाल पर लटकी हुई दिखाई पड़ी जिसे लेकर वह वहाँ से तुरंत ही लौट पड़े। किसी प्रकार जान बचाकर नारदजी शिव-पार्वती के पास आए, और माला देते हुए शिवजी

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

से बोले—"महाराज ! आप धन्य हैं। जहाँ कुछ देर पहले राजभवन देखा था, वहाँ तो घनघोर जंगल हो गया। न वहाँ पार्वतीजी के भाइयों एवं परिवारवालों का पता है, और न वे मनोहर उद्यान और उपवन ही वहाँ दिखाई पड़ रहे हैं। भयंकर सिंह, व्याघ्रादि हिंस्र-पशु वहाँ दहाड़ रहे हैं। जिस समय मैं वहाँ पहुँचा, संयोग से बादल उमड़ आए, ख़ूब वृष्टि हुई, और अंधकार छा गया। उस भयंकर परिस्थिति में मेरे प्राण तो संकट में पड़ गए। मैं ही अकेला वहाँ था। किसी प्रकार बिजली की चमक में एक वट-वृक्ष की डाली में लटकी हुई आपकी यह माला मुझे दिखाई पड़ गई, और उसे लेकर मैं भागा चला आ रहा हूँ। मैं तो समझता हूँ कि यह सब माया भगवती पार्वतीजी की है।"

नारदजी की बातें सुनकर शिवजी ने हँसते हुए पार्वतीजी से कहा—"क्यों ? तुम अब भी नहीं मानतीं। स्त्री-चरित्र का पूरा दृश्य दिखाए बिना तुम्हारा जी नहीं भरता। बेचारे देवर्षि को क्यों नाहक़ परेशान किया ? यही सब बातें थीं, जिनके कारण मैं इस बार के भ्रमण में तुम्हें अपने साथ नहीं ला रहा था।"

पार्वतीजी शिव की मर्म-भरी बातें सुनकर घबराने लगीं। हाथ जोड़कर बोलीं—'भगवन् ! यह सब तो आपकी माया का ही विस्तार है। मैं भला इस योग्य कहाँ, जो नारदजी को भुलावा दे सकूँ।"

नारदजी ने देखा, दोनो ही अतुल महिमाशील हैं। एक दूसरे के ऊपर ज़िम्मेदारी हटाकर दोनों ही उन्हें भुलावा देना चाहते हैं। उन्होंने दोनो के चरण-स्पर्श किए, और पार्वतीजी के सम्मुख विनीत भाव से निवेदन करते हुए कहा—"माता ! आप पतिव्रताओं में अग्रणी हैं, अखंड सौभाग्यशालिनी हैं। आदि-

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

शक्ति-स्वरूपा हैं। यह सब आपके पातिव्रत की महिमा है। आपके पुण्य चरित्र की चर्चा कर स्त्रियाँ अटल सौभाग्य प्राप्त करती हैं। आपका नाम स्मरण करने-मात्र से ऋद्धि सिद्धि की प्राप्ति होती है, अतएव आपके लिये यह सब कोई बड़ी बात नहीं है।"

नारदजी की विनय-भरी वाणी में यथार्थ था, पार्वती और शंकरजी उनके प्रसन्न मुख-मंडल की ओर देखते हुए मुस्किराने लगे।

पार्वती और शिव की इस पुण्य कथा के श्रवण और मनन से मानव-समाज में परस्पर विश्वास, पूज्य-भावना एवं आस्तिकता की वृद्धि होती है।

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

राम-नवमी

मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्रजी का जन्म चैत्र शुक्ल पक्ष की नवमी को अयोध्या नगरी में हुआ था। बाल्मीकि तथा तुलसी-कृत रामायण के अनुसार भगवान् विष्णु ने त्रेता में राम का अवतार लिया था। भगवान् राम की जन्म-तिथि ही राम-नवमी के नाम से प्रसिद्ध है।

विधि—नवमी को प्रातः स्नानादि करके भगवान राम की प्रतिमा का पूजन करें। दिन को उपवास अथवा फलाहार करें, रात्रि में जागरण तथा रामायण का पाठ अथवा श्रवण करें।

दशमी को प्रातः विधिवत् भगवान् राम का पूजन करें, यथा सामर्थ्य ब्राह्मणों को भोजन करावें, और गो, सोना, तिल, वस्त्रादि दक्षिणा में दें।

राम-नवमी के व्रत में वही नवमी तिथि ग्रहण की जाती है, जो मध्याह्न में हो। अगस्त्य-संहिता में कहा गया है —

चैत्र शुक्ल नवमी यदि पुनर्वसु नक्षत्र युक्त हो, और मध्याह्न में भी यही योग हो, तो वह परम पुण्य को देनेवाली है। किंतु यदि अष्टमीविद्ध नवमी है, तो उसे वैष्णव लोग नहीं मानते। वे तो नवमी का ही व्रत रखते हैं, जब कि रामचंद्रजी का जन्म हुआ था। पुनर्वसु-युक्त नवमी सम्पूर्ण मनोरथों की सिद्धि-दात्री है।

इस संबंध में रामचरित-मानस में वर्णित राम-कथा जगत्-प्रसिद्ध है।

कथा

रामचंद्रजी की पावन कथा को संभवतः ऐसा अभागा ही कोई हिन्दू होगा, जो न जानता हो। उनके जीवन की छोटी

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

से-छोटी घटनाएँ भी हिंदू-जाति के उच्च आदर्शों की पृष्ठ-भूमि प्रस्तुत करती हैं। पुराणों की मान्यता है कि जब कभी धरती पर पाप की अभिवृद्धि हो जाती है, धर्म की महिमा घट जाती है, पापियों का अभ्युदय होता है, और पुण्यात्मा लोग कष्ट उठाने लगते हैं, तो परमात्मा का अवतार होता है। श्री श्रीरामचंद्रजी का अवतार दशानन रावण तथा उसकी दुर्दांत निशाचरी सेना से संत्रस्त धरती का उद्धार करने के लिये हुआ था। रामचंद्रजी के तीन अन्य छोटे भाई भी थे। भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न। इन चारों भाइयों में बाल-जीवन से ही ऐसी प्रीति थी कि उसका वर्णन करते हुए बड़े-बड़े कवि लोग भी अपने को असमर्थ बताते हैं। श्रीरामचंद्र जब बालक थे, तभी से पापियों के निर्दलन का कार्य आरंभ कर दिया था। राक्षसों द्वारा विश्वामित्रादि मुनियों की यज्ञ-रक्षा के लिये उन्होंने लक्ष्मणजी के साथ ऐसा रण-कौशल दिखलाया कि असुर-मंडली को यह दिखलाई पड़ने लगा कि उनका अंत समीप आ गया है।

जनकपुरी में महादेवजी के विशाल धनुष को तोड़कर रामचंद्रजी ने सर्व-प्रथम समस्त संसार का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। रावण आदि त्रैलोक्य विजयी असुर जिस धनुष को तोड़ना तो दूर उसको स्थान से टस से-मस भी नहीं कर सके थे, उसीको रामचंद्रजी ने बड़े लाघव के साथ उठाकर तोड़ दिया, और त्रैलोक्य सुंदरी जानकी के साथ उनका मंगल विवाह रचा गया। सीताजी की अन्य चचेरी बहनों के साथ रामचंद्रजी के अन्य तीनो भाइयों का विवाह भी उसी समय हो गया।

पिता दशरथजी धीरे-धीरे वृद्धावस्था की ओर बढ़ रहे थे, और इधर प्रजा अपने परम प्यारे रामचंद्रजी को युवराज के

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

पद पर आसीन देखना चाहती थी, अतः अपने मंत्रियों के परामर्श से दशरथजी ने राम के यौवराज्याभिषेक के मंगलमय समारोह की रचना का आदेश दिया। कुचक्री देवताओं के षड्यंत्र से भरत की माता रानी कैकेयी की मति उलट गई। कुछ दिनों पूर्व जिस राम को वह अपने नेत्रों का तारा समझती थी, उन्हीं को चौदह वर्ष के घोर वनवास के साथ उसने अपने पुत्र भरत को युवराज बनाने का ऐसा दुराग्रह किया कि राजा दशरथ को उसके सामने झुक जाना पड़ा। रामचंद्रजी अपने प्रिय भाई लक्ष्मण तथा प्राणप्रिया पत्नी सीता के साथ चौदह वर्ष के लिये वनवास को चले गए, और इधर राजा दशरथ ने शरीर त्याग दिया। आनंद-समुद्र में निमग्न अयोध्या श्मशान-सी बन गई। किंतु भरतजी की सुबुद्धि ने उस विपत्ति में भी पृथ्वी की रक्षा की। अपनी माता के दुराग्रह से प्राप्त राज्य को उन्होंने ठुकरा दिया, और अपने उज्ज्वल भ्रातृ-प्रेम का ऐसा मनोरम परिचय दिया जिसकी तुलना संसार के इतिहास में भी नहीं मिलती। बड़े भाई राम की आज्ञा से उन्होंने चौदह वर्षों तक साम्राज्य की रक्षा तो अवश्य की, किंतु स्वयं को राम के अनुचर के ही रूप में रक्खा। राजधानी से दूर एक कुटिया में वह वही जीवन बिताते रहे, जो वनवासी राम, लक्ष्मण और सीता का था।

अपने चौदह वर्षों की वनवासावधि में राम ने लोकोत्तर चमत्कारी कार्य किया। असुरों के अनेक गिरोहों को ध्वस्त करके उन्होंने भारत भूमि को निष्कंटक बना दिया। पापियों का समूल विनाश करके उन्होंने सदाचरण की प्रतिष्ठा की। किष्किंधा के आततायी राजा बालि को मारकर उसके पुत्र अंगद को युवराज तथा उसी के छोटे भाई सुग्रीव को राजा बनाया। इसके बाद सीताजी का अपहरण करनेवाले रावण

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

का समूल संहार करके उसके सत्कर्मी अनुज विभीषण को लंका का राज्य दे दिया। यह सब कथा रामचंद्रजी ने अपनी व्यवस्था-बुद्धि एवं राजनीति की चातुरी से इस प्रकार संपादित की कि आज भी उन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम की पावन उपाधि से विभूषित किया जाता है। कहीं भी उन्होंने तिल-मात्र के लिये उस भारतीय मर्यादा का उल्लंघन नहीं किया, जिसके कारण हिंदू-जाति को संसार की सभ्य एवं समुन्नत जातियों में ऊँचा स्थान मिला है।

अयोध्या वापस लौटकर रामचंद्रजी ने भरत से पुनः राज्य-पद प्राप्त किया, और बहुत दिनों तक उन्होंने इस भू-मंडल पर इस प्रकार राज्य किया कि आज भी 'राम-राज्य' की उच्च कल्पना का हम आदर करते हैं। निष्कंटक राज्य में कहीं भी दुःख-द्वंद्व का नाम नहीं, चारो वर्णों एवं आश्रमों की मर्यादा सुरक्षित थी। धन-धान्य से संपन्न प्रजा सत्कर्मों में लीन थी, उसे न कोई आधिदैविक विपत्ति थी, न आधिभौतिक। सभी लोग स्वस्थ तथा मनस्वी थे। न्याय-परायणता तो इतनी अधिक थी कि स्वयं रामचंद्रजी ने एक धोबी के मुख से एकांत में अपनी निंदा सुनकर अपनी प्राणप्रिया पत्नी सीता को त्याग दिया। उस समय सीताजी गर्भिणी थीं। उनका चरित्र अत्यंत निष्कलुष तथा महान् था किंतु राम ने अपनी प्रजा के चित्त को संतुष्ट करने के लिये इन सब बातों का भी विचार नहीं किया। ऐसा था राम का उज्ज्वल चरित्र, जो उनकी पुण्य कथा के रूप में आज भी घर-घर गाया जाता है। राम-नवमी प्रतिवर्ष रामचंद्रजी के इसी प्रेरक चरित्र का पावन संदेश लेकर आती है।

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

गंगा दशहरा

ज्येष्ठ मास शुक्ल पक्ष, दशमी तिथि, बुधवार, हस्त नक्षत्र, व्यतीपात, गर और आनंद योग तथा कन्या राशि में चंद्रमा एवं वृषराशि में सूर्य, इन दश योगों में गंगा स्नान दस पापों का हरनेवाला है। इसीलिये यह दशहरा कहलाता है। इस दिन स्नान करने से विष्णु-लोक की प्राप्ति होती है। यदि यह तिथि सोमवार के दिन पड़ जाय, और हस्त नक्षत्र भी हो, तो दस पाप ही नहीं संपूर्ण पाप मिटाता है। ज्येष्ठ-मास की शुक्ल दशमी के दिन हस्त नक्षत्र में गंगाजी पृथ्वी पर अवतरित हुईं थीं। यदि गंगाजी तक इस दिन न पहुँच सके, तो किसी भी नदी अथवा जलाशय में स्नान तथा सूर्य-नमस्कार कर तिलोदक देना चाहिये, फिर गंगावतरण की कथा-कहनी सुननी चाहिये।

कथा

गंगावतरण की अनेक सुंदर कथाएँ पुराणों में दी हैं, परंतु सभी जगह मुख्य कथा—अयोध्या के महाराज सगर के दो रानियाँ केशनी और सुमति थीं। केशनी के असमंजस नाम का एक पुत्र और अंशुमान नाम का एक पौत्र था। सुमति के ईश्वर-कृपा से साठ हज़ार पुत्र थे। विशाल परिवार से राजा सगर बड़ा सुखी था। अपने को अजय घोषित करने के लिये जब राजा सगर ने अश्वमेध-यज्ञ किया, और विजय-चिन्ह अश्व को छोड़ा, तो साठों हज़ार पुत्र अश्व की रक्षा के लिए उसके पीछे-पीछे चले। राजा सगर के वैभव एवं पराक्रम से देवराज इंद्र को बड़ी चिंता थी। उन्हें डर था कि कदाचित् सगर अश्वमेध-यज्ञ द्वारा उन्हें पराजित न कर दें। इंद्र ने चुपके से राजा सगर के उस अश्व को पकड़कर महामुनि कपिलदेव

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

के आश्रम में बँधवा दिया। जब राजा सगर के समस्त साठों हज़ार पुत्र अश्व को न ढूँढ़ सके, तो वे बहुत चिंतित हुए। तभी उन्हें पता चला कि अश्व कपिल मुनि के आश्रम में बँधा है। वे परेशान तो थे ही मुनि के आश्रम में पहुँचकर उन्होंने बड़ा उपद्रव मचाया, और महामुनि को भी अनुचित बातें सुनाईं। महामुनि को इंद्र के षड्यंत्र का पता न था, उन्होंने सगर के उन साठ हज़ार घमंड में चूर राजकुमारों को अपनी क्रोधाग्नि से भस्म कर दिया।

बहुत दिनों बाद भी जब कोई राजकुमार अयोध्या न लौटा, तब राजा सगर को चिंता हुई। उन्होंने अपने नवयुवक पौत्र अंशुमान को इन सबका तथा उस अश्व का पता लगाने भेजा। उत्साही और तेजस्वी अंशुमान अपने पितृव्यों को खोजता हुआ जब अपने मामा के यहाँ पहुँचा, तब उसे सब बातों का पता लगा। उसने कपिल मुनि की शरण में जाकर विनम्रता पूर्वक अपने पितृव्यों की अकाल-मृत्यु से उद्धार का उपाय पूछा। आश्रम के गरुड़ ने उन्हें उपाय बताया कि तुम्हारे ये पितृव्य तभी शांति प्राप्त करेंगे, जब गंगाजी को स्वर्ग-लोक से पृथ्वी पर लाया जाय, और उनके जल से इन सबकी भस्मों का स्पर्श कराया जाय। इस समय तो अश्व को ले जाकर अपने पितामह का यज्ञ पूरा करो और फिर उनके उद्धार का उपाय करो। अंशुमान ने अश्व सहित वापस लौटकर राजा सगर को जब पूरी बात बताईं, तो शोक छा गया। किसी प्रकार यज्ञ तो पूरा हो गया, किंतु उन अकाल-मृत्यु से राजकुमारों के उद्धार का कोई तत्काल मार्ग न दिखाई दिया। स्वर्ग से भूलोक में गंगाजी को लाना सरल कार्य न था। जन्म-जन्मांतर की तपस्याओं के बाद ही यह हो सकता था। राजा सगर एवं उनके पुत्र असमंजस ने अपना जीवन कठोर तपस्या में खत्म

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

कर दिया, गंगाजी अवतरित न हुईं। राजा सगर और असमंजस के बाद अंशुमान और उनके पुत्र दिलीप गद्दी पर बैठे। ये दोनो ही उपकारी, न्यायी शासक थे। इन्होंने भी गंगाजी को पृथ्वी पर लाने के लिए कठोर तप किया, किंतु जीवन समाप्त होने तक भी सफलता न मिली। इस प्रकार चार पीढ़ी का कठोर तप विना सिद्धि प्राप्त के बीत गया।

दिलीप के पुत्र भगीरथ परम प्रतापी तथा धर्मात्मा राजा थे। प्रजा-प्रेम एवं परदुःखकातरता उनमें कूट-कूटकर भरी थी। अपने पूर्वजों की विफल तपस्या को पूर्ण करने की उनमें प्रबल इच्छा थी। वे चाहते थे कि पुत्र प्राप्त हो जाने पर गंगावतरण के लिए कठोर तपस्या करें, किंतु दैव-योग से प्रौढ़ हो जाने पर भी उनके कोई संतान न हुई, तब अपने मंत्रियों को राज्य भार सौंपकर, गंगाजी को लाने के लिए वे गोकर्ण तीर्थ में पहुँचकर कठोर तपस्या करने लगे। उनकी तपस्या उनके पूर्वजों से विपरीत थी। उनका प्रण था कि 'या तो गंगाजी धरती पर आएँगी, अन्यथा यह धरती मेरे तप से डगमगा जायगी।' राजा भगीरथ ने अपनी कठोर तपस्या से देवताओं को विचलित कर दिया। अपनी सभी इंद्रियों को जीतकर पंचाग्नि-ताप में अपने सुंदर, मनोहर शरीर को झुलस डाला। महीनों तक ऊर्ध्व बाहु खड़े रहकर निराहार रहे।

समस्त लोकों में इस कठोर तपस्या की चर्चा होने लगी। इस प्रकार अनेक वर्षों बाद जब सूर्य-चंद्र से यह कठोर तप न देखा गया, तब उन्होंने ब्रह्माजी से भगीरथ को सन्तुष्ट करने की प्रार्थना की। ब्रह्माजी देवताओं को लेकर राजा भगीरथ के समीप पहुँचे, और प्रेम-भरी वाणी में बोले--

"राजन्! तुम्हारे इस कठोर तप से त्रैलोक्य विचलित हो रहा है। तुम्हारी यह तपस्या अनुपम है। मैं तुमसे प्रसन्न

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

हूँ, और तुम्हें अभीष्ट वरदान देने के लिये यहाँ आया हूँ। अब तुम इच्छानुसार वरदान माँगो।"

राजा भगीरथ तो इसी की प्रतीक्षा में थे। हाथ जोड़कर ब्रह्माजी को उन्होंने प्रणाम किया, फिर विनय-भरी वाणी में बोले—"पितामह! यदि आप सचमुच प्रसन्न हैं, तो हमारे पूर्वज महाराज सगर के शापित साठ हज़ार पुत्रों के उद्धार के लिये स्वर्ग से गंगाजी को भू-तल पर भेजिए, क्योंकि गंगाजी के विना उनकी मुक्ति नहीं हो सकती। आप जानते ही हैं, अनेक पीढ़ियाँ इस कार्य में समाप्त हो चुकी हैं, और अब स्थिति ऐसी आ गई है कि हमारा वंश भी समाप्ति पर आ गया है। महाराज इक्ष्वाकु से लेकर आज तक अयोध्या का राजपद कभी सूना नहीं रहा, किंतु विना गंगाजी के अब वह सूना होने जा रहा है। अतएव मेरी प्रार्थना है कि महाराज इक्ष्वाकु की प्यारी अयोध्या अनाथ न हो, इसलिये मुझे भी एक पुत्र प्राप्त हो।"

राजा भगीरथ की विनय सुनकर ब्रह्माजी बोले—"आयुष्मान् भगीरथ! तुम्हारे अतृप्त पूर्वजों को तारनेवाली गंगा अवश्य भू-तल पर उतरेंगी, शीघ्र ही सुयोग्य पुत्र प्राप्त होगा। किंतु गंगाजी की वेगवती धारा को भू-तल पर रोकने का प्रबंध तुम्हें करना होगा?"

राजा भगीरथ ने पूछा—'पितामह! कौन-सा प्रबंध करना होगा।"

ब्रह्माजी बोले—"भगीरथ! गंगाजी की धारा इतनी प्रबल है, जिसे सिवा शंकर के दूसरा कोई नहीं रोक सकता। इस लिये जब शंकरजी तैयार हो जायँ, तभी गंगाजी को बुलाना।"

राजा भगीरथ हताश नहीं हुए। प्रसन्न होकर बोले—"पितामह! मैं उसका भी प्रयत्न करूँगा।"

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

देवताओं-सहित ब्रह्माजी के चले जाने पर, उसी स्थान पर, राजा भगीरथ ने देवाधिदेव शंकर को प्रसन्न करने के लिये पुनः कठोर तपस्या शुरू कर दी। एक अँगूठे पर खड़े होकर उन्होंने शंकरजी के मंत्र का जप किया। भगीरथ की कठोर तपस्या की चर्चा अपने गणों द्वारा उन्हें मिल चुकी थी। एक वर्ष की समाप्ति पर वह पार्वती-समेत भगीरथ के सामने आकर खड़े हो गए और उनकी प्रार्थना पर गंगा की वेगवती धारा को स्वयं सँभालने का कार्य ले लिया।

भगीरथ को अब मन चाहा वरदान मिल गया। उन्होंने ब्रह्माजी से शंकरजी द्वारा गंगा के सँभालने की बात बताते हुए गंगाजी को भूतल पर भेजने का आग्रह किया।

ब्रह्मा ने अपने कमंडलु की धार से गंगा को नीचे उतरते हुए भूतल पर जाने की जब आज्ञा दी, तब गंगाजी को यह अहंकार हो गया, उन्होंने सोचा, देखती हूँ, पृथ्वी पर कौन ऐसा है, जो मेरी वेगवती धारा को सँभाल सकेगा। ब्रह्मा के कमंडलु से नीचे उतरते ही उन्होंने विकराल वेग धारण किया और मन में यह कुसंकल्प कर लिया कि शंकर-समेत समस्त संसार को मैं समुद्र बनाकर पाताल में प्रविष्ट हो जाऊँगी। गंगाजी के इस कुसंकल्प का अनुमान शंकरजी को तभी हो गया था। उन्होंने देखा कि गंगाजी की धारा का वेग इतना भयंकर स्वर करते हुए नीचे आ रहा है कि दिगंत मूर्च्छित हो रहा है, पर्वतों की गुफाएँ फटी जा रही हैं। चराचर भय-विह्वल होकर संत्रस्त है और आकाशस्थ देवता भी अवसन्न हो रहे हैं, तो उन्होंने अपने जटा-जूट को बिखरा लिया और दाहने पैर के पंजे पर शरीर का समस्त भार रख ऐसी विकराल मुद्रा में खड़े हो गए कि समीप में खड़े उनके गण भी विचलित होने लगे और पार्वती की प्रसन्नता भी लुप्त हो गई।

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

गंगाजी आकाश से गिरकर शिवजी की जटा में समा गईं। जटा में पहुँचते ही उनका सारा वेग, सारा स्वर, जाने कहाँ विलीन हो गया। क्षण-भर का सारा आतंक धरती में समा गया और चराचर प्रसन्न मुद्रा में आकाश की ओर देखने लगे। इधर अनेक प्रयत्नों के बाद भी गंगाजी को जटा से निकलने का मार्ग नहीं मिला। उनकी समूची धारा जटा में समाकर न जाने कहाँ विलुप्त हो गई।

वर्षों तक भटकने के बाद भी जब गंगाजी को शंकर की जटा से बाहर निकलने का कोई रास्ता न दिखाई दिया, तब वह निराश होकर उसी में बैठ गईं। किंतु बाहर उनकी प्रतीक्षा में बेचैन राजा भगीरथ का बुरा हाल था। शिवजी का उग्र रूप देखकर उन्होंने जान लिया कि कुछ-न-कुछ गड़बड़ अवश्य हुआ है। कोई और उपाय न देख उन्होंने अब शिवजी की आराधना कर गंगाजी को मुक्त कराने की कोशिश की। शंकरजी ने प्रसन्न होकर अपनी जटा के अग्रभाग को निचोड़ कर गंगाजी के बिन्दु को बाहर निकाला। वह बिन्दु कैलास पर्वत के बिन्दु सरोवर में गिरा, जिससे गंगाजी की सात धाराएँ बन गईं। तीन धाराएँ ह्लादिनी, पावनी और नलिनी पूर्व दिशा की ओर तथा सुचक्षु, सीता एवं सिन्धु पश्चिम दिशा की ओर चल पड़ीं और सातवीं धारा राजा भगीरथ के पीछे पीछे उनके पूर्वजों का उद्धार करने के लिये चल पड़ी। भगीरथ जिस मार्ग से आगे बढ़े, उनके पीछे-पीछे गंगाजी की सातवीं धारा भी चली। मार्ग की ऊबड़-खाबड़ और बंजर भूमि को स्वर्ग बनाती हुई आगे बढ़ी, गंगाजी के साथ-साथ देवता, दानव, मानव, यक्ष, किन्नर, नाग, सर्प और अप्सराओं के झुंड-के-झुंड चलने लगे।

राजा भगीरथ के मार्ग में राजर्षि जह्नु का तपोवन पड़ा

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

जहाँ वे तपस्या में लीन थे। भगीरथ अभी सोच भी न पाये थे कि गंगाजी की तेज धारा ने जह्नु-आश्रम को तहस-नहस कर डाला। राजर्षि जह्नु क्रोध में गंगाजी की समस्त जलराशि को देखते ही देखते पी गये। फिर तो समस्त भूतल पर कोलाहल मच गया। गंगाजी की धारा के साथ आनेवाले देवताओं तथा ऋषि-मुनियों ने राजर्षि जह्नु की बड़ी प्रार्थना की और यह आश्वासन दिया कि अब गंगाजी आपकी पुत्री के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त करेंगी। कृपया उन्हें मुक्त करें।

राजर्षि जह्नु ने अपने दाहने कान से गंगाजी की धारा को फिर बाहर निकाल दिया और वह अपने पूर्ववत् बल-वेग से भगीरथ के पीछे-पीछे बह चली। जह्नु के कान से निकलने के कारण उनका नाम जाह्नवी और भगीरथ के पीछे-पीछे चलने के कारण तथा भगीरथ की तपस्या से अवतीर्ण होने से उन्हें लोग भागीरथी के नाम से पुकारने लगे। इस प्रकार भूतल को स्वर्ग बनाती हुई गंगाजी वहाँ पहुँचीं, जहाँ महामुनि कपिल के आश्रम में सगर के साठ सहस्र पुत्रों की अस्थियाँ भस्म के रूप में पड़ी थीं। गंगाजी के जल स्पर्श से वे सब तुरंत ही मुक्त होकर स्वर्ग चले गए। अंत में गंगाजी समुद्र में विलीन हो गईं और राजा भगीरथ ब्रह्मा की आज्ञा से अयोध्या वापस लौटकर अपना राज-काज पुनः देखने लगे।

एक जगह पुराणों में गंगाजी की उत्पत्ति विष्णु के चरणों से बताई गई है। कथा है—जब दैत्यराज बलि को छलने के लिए भगवान् विष्णु ने वामन रूप धारण किया और विराट् त्रिविक्रम बनकर अपने तीन पगों में त्रैलोक्य को नाप लिया, उस समय पितामह ब्रह्मा ने विष्णु का चरणोदक लेकर अपने कमंडलु में भर लिया था। बाद में राजा भगीरथ की कठोर

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

तपस्या से प्रसन्न होकर उन्होंने अपने कमंडलु से गंगाजी को बाहर निकाला था।

लेकिन पुराणों में यह भी है कि एक बार भगवान् विष्णु के सम्मुख लीलापति शंकरजी ने ऐसा मनोहर एवं अपूर्व तांडव नृत्य किया कि वह पुलकित होकर जल-रूप हो गए। भगवान् ब्रह्मा भी वहाँ मौजूद थे; उन्होंने भगवान् विष्णु के उस जल-रूप को अपने कमंडलु में भर लिया था।

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

नाग-पंचमी

श्रावण-शुक्ला पंचमी को नाग की पूजा होती है, इसलिये इस तिथि को नाग-पंचमी कहते हैं। भारत में इतने अधिक नाग हैं कि प्रतिवर्ष सर्पदंश से ही लाखों जाने जाती हैं। सर्प-से बचाव का दूसरा उपाय न देख धर्म-भीरु जनता ने सर्प की पूजा करनी आरंभ कर दी। सर्प चूँकि वर्षा में ही अधिक दिखाई देते हैं, इसीलिये सावन में नाग पूजे जाते हैं।

इस व्रत के करनेवाले को चतुर्थी को केवल एक बार भोजन करके, पंचमी को दिन-भर उपवास रहकर, शाम को भोजन करना चाहिए। घर के दरवाजे के दोनों ओर गोबर से नाग की मूर्ति बनाए। चाँदी, सोना, काठ अथवा मिट्टी की कलम से हल्दी तथा चंदन से पाँच फनवाले पाँच नाग के नाम लिखे। पंचमी के दिन खीर, पंचामृत और कमल के पुष्प से तथा धूप, दीप, नैवेद्य आदि से विधिवत् नागों का पूजन करे। पूजन के बाद ब्राह्मणों को लड्डू या खीर का भोजन करावे। बारह नाग—अनंत, वासुकी, शेष, पद्म, कँवल, कर्कोटक, अस्वतर, धृतराष्ट्र, शंखपाल, कालिया, तक्षक और पिंगल, इनमें से एक-एक नाग की एक-एक मास में पूजा करनी चाहिए। ब्राह्मणों को खीर का भोजन कराना चाहिए और पूजा करानेवाले व्यास पंडित को यदि संभव हो नागपंचमी के दिन स्वर्ण और गौ का दान देना चाहिए। चाँदी या सोने के नाग पान के पत्ते पर रखकर दान कर सकते हैं। पंचमी के दिन नाग की पूजा करनेवाले को उस दिन पृथ्वी न खोदनी चाहिए।

कथा

एक किसान मणिपुर-नामक गाँव में रहता था। उसके दो

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

लड़के और एक कन्या थी। एक समय वह अपने खेत में हल जोत रहा था, उसके हल की फाल में बिंधकर साँप के तीन बच्चे मर गए। बच्चों की माता नागिन ने पहले तो बहुत विलाप किया, फिर अपने बच्चों को मारनेवालों से बदला लेने का संकल्प किया। रात्रि के समय नागिन ने उक्त किसान, उसकी स्त्री और दोनो बच्चों को डस लिया, जिससे वे चारों मर गये। दूसरी रात वह नागिन जब कन्या को डसने के लिये गई, तब कन्या ने डरकर उसके सामने दूध का कटोरा रख क्षमा-प्रार्थना करने लगी। यद्यपि लड़की को मालूम न था; परंतु वह दिन नाग-पंचमी का था, इस कारण नागिन ने प्रसन्न होकर लड़की से वर माँगने को कहा। लड़की ने यह वर माँगा कि मेरे माता-पिता और दोनो भाई पुनः जीवित हो जायँ और जो आज के दिन नागों की पूजा करे, उसको कभी नाग डसने की बाधा न हो। नागिन लड़की को वरदान देकर चली गई। कहते हैं, उसी दिन से लोक में नाग-पंचमी के पूजन का प्रचार हुआ।

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

श्रावणी और रक्षा-बंधन

श्रावण की पूर्णिमा के दिन दो त्योहार एक साथ ही होते हैं। श्रावणी और रक्षा-बंधन। रक्षा-बंधन के दूसरे नाम भी हैं। इसे राखी तथा सलोनो भी कहते हैं। इस दिन बहनें अपने भाई के हाथ में अथवा पुरोहित एवं निर्धन ब्राह्मण धनिक वर्गों के लोगों के हाथ में राखी बाँधते हैं और इसके दक्षिणा स्वरूप कुछ प्राप्त करते हैं। अनेक धर्म-ग्रंथों का मत है कि श्रावणी को ब्रह्मचारी और द्विजों को चाहिए कि गाँव के पास तालाब या नदी के किनारे जाकर गुरु की आज्ञानुसार शास्त्रोक्त-विधि से श्रावणी-कर्म करे। पहले शरीर की शुद्धि के लिये दूध, दही, घी, गोबर, और गोमूत्र इन पाँचों का पंचगव्य बनाकर पीना चाहिए। फिर शास्त्र-विधि से तैयार की हुई वेदी में हविष्यान्न (खीर, घी, शक्कर, जौ आदि) का विधिवत् हवन करना चाहिए। इसी को उपाकर्म कहते हैं। उसके बाद जल-प्रवाह के सामने जल में खड़े होकर तथा हाथ जोड़कर सूर्य भगवान् का ध्यान और स्तुति करना चाहिए।

फिर अरुंधती-समेत सप्त ऋषियों का पूजन करके दही और सत्त की आहुतियाँ दे। इसको उत्सर्जन कहते हैं।

राखी के दिन स्नान कर देवता, पितर और सप्तर्षियों का तर्पण करे। दोपहर के बाद ऊनी या सूती पीला वस्त्र लेकर उसमें चावल रखकर पोटली बना ले और उसे सुवर्ण के रंग के समान हल्दी अथवा केसर के रंग में रँगकर एक पात्र में रख दे। घर को गोबर से लिपवाकर और चौक पुरवाकर उस पर कलश की स्थापना कराए। उस कलश में अन्न भरा होना चाहिए और उसके ऊपर उस पीले वस्त्र में बँधी हुई एक या अनेक चावलोंवाली पोटलियाँ रक्खी हों। यजमान पूर्वाभिमुख

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

होकर किसी आसन पर बैठे और उस कलश का शास्त्रीय विधि से पूजन करे। पूजन के अनन्तर उस चावल की पोटली से युक्त पीत वस्त्र को यजमान के दहिने हाथ में बाँधे और उसके बाद वहाँ पर उपस्थित अन्यान्य लोगों के हाथों में बाँधे। बाँधते समय यह मन्त्र पढ़े :—

येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबलः ;
तेन त्वां प्रतिबध्नामि रक्षे माचल-माचल।

कहीं कहीं पर रक्षाबंधन के कुछ लौकिक आचार भी किए जाते हैं। दीवाल में कुछ चित्र-सा बनाया जाता है और उसकी विधिवत् पूजा की जाती है। सेंवई तथा खीर का नैवेद्य चढ़ाया जाता है और मुख्य द्वार के दोनो ओर हाथ का छापा मारकर राखी चिपकाई जाती है। घर के बड़े पुरुष पूजन करके अपने छोटों के हाथों में राखी अथवा जरई बाँधते हैं। जरई धान अथवा जौ के पौधों को कहते हैं।

भगवान् श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिरजी को कथा सुनाई थी, उसी के आधार पर रक्षा-बंधन त्योहार शुरू हुआ।

इस दिन जैन साधुओं, मुनियों, विशेषकर विष्णुकुमार की पूजा की जाती है, कथा पढ़ी जाती है, जिसका सारांश इस प्रकार है।—'उज्जयिनी के राजा श्रीवर्मा के चार मंत्री थे, बली, बृहस्पति, नमुचि और प्रह्लाद। ये चारो श्रमणों के कट्टर विरोधी थे। राजा भी यद्यपि वैदिक मतानुयायी था, तथापि सभी धर्मों के प्रति आदर रखता था। एक बार उसने अपने उपवन में ठहरे हुए जैन मुनि आचार्य अकंपन और उनके संघ के सात सौ जैन साधुओं का दर्शन करने का निश्चय किया। राजा के साथ उसके चारो मंत्री भी थे। मंत्रियों ने जैन साधु से शास्त्रार्थ किया। श्रुतसागर-नामक जैन मुनि ने मंत्रियों को पराजित किया, जिससे वे अत्यंत लज्जित

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

तथा क्षुब्ध हुए और रात्रि में उक्त मुनि की हत्या कर देने का निश्चय किया। किंतु रात्रि में जब मंत्रियों ने मुनि की हत्या के लिये आक्रमण किया, तब श्रुतिसागर मुनि अपने गुरु के उपदेश से ध्यान-मग्न थे। तपस्या के अमिट प्रभाव के कारण मंत्रियों का षड्यंत्र सफल नहीं हुआ और उनके सशस्त्र हाथ ऊपर ही अकड़ गए। दूसरे दिन राजा को जब इसका पता लगा, तो वह अत्यंत क्रुद्ध हुए और इन चारो मंत्रियों को अपदस्थ करके राज्य से बाहर निकाल दिया।

मंत्री राज-काज में अत्यंत कुशल तथा कूटनीतिज्ञ थे। उन्होंने हस्तिनापुर के राजा श्रीपद्म के यहाँ आश्रय लिया और थोड़े ही दिनों में अपनी कार्य-कुशलता से उन्हें वश्य बना लिया। दैवयोग से आचार्य अकंपन का संघ हस्तिनापुर में भी पहुँचा। मंत्री क्रुद्ध पहले ही से थे और वहाँ का राजा उनकी मुट्ठी में था। उन्होंने राजा से कहकर सात दिनों के लिये संपूर्ण राज्य-व्यवस्था का भार अपने ऊपर ले लिया था। आचार्य के संघ को घेरकर मंत्रियों ने चारो ओर से आग लगा दी और पुरुषमेध-नामक यज्ञ का अनुष्ठान करने की घोषणा कर दी। इस अपकर्म के कारण चारो ओर हाहाकार मच गया, किंतु राजा विवश था। मंत्रियों की वह सात दिन तक कुछ भी करने की स्वतंत्रता दे चुका था। आचार्य अकंपन के संघ की इस दुरवस्था का पता मिथिलापुरी में चातुर्मास करनेवाले एक अन्य जैनमुनि को लगा। आकाश में अवस्थित श्रवण नक्षत्र के कंपन को देखकर उन्हें ज्ञात हो गया कि हस्तिनापुर में आचार्य अकंपन का संघ अग्नि की लपटों में जल रहा है। उन्होंने अपने एक चतुर शिष्य को योगी विष्णुकुमार के समीप उनकी प्राण-रक्षा के निमित्त भेज दिया।

योगी विष्णुकुमार को सभी सिद्धियाँ प्राप्त थीं। वह इच्छा-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

नुसार अपना आकार घटा-बढ़ा सकते थे। वह राजा श्रीपद्म के बड़े भाई थे। हस्तिनापुर पहुँचकर उन्होंने अपने छोटे भाई को बहुत फटकारा, किंतु राजा की विवशता सुनकर वह स्वयं यज्ञस्थल पर पहुँचे। मंत्रिप्रवर बलि ने योगी विष्णुकुमार का स्वागत किया और उनसे महान् यज्ञ में कुछ दक्षिणा माँगने की प्रार्थना की। योगी विष्णुकुमार ने बलि से केवल तीन पग भूमि माँगी। बलि की इच्छा थी कि वह कुछ और माँगते, किंतु विष्णुकुमार को इतना ही पर्याप्त था। बलि के संकल्प जल छोड़ते ही विष्णुकुमार ने विराट् रूप धारण कर लिया। अपने प्रथम पग से उन्होंने सुमेरु पर्वत-पर्यंत पृथ्वी को नाप लिया, दूसरे पग से मानुषोत्तर पर्वत को नाप लिया, और तीसरा पग अभी शेष ही था कि संपूर्ण पृथ्वी हिल गई, आकाश से तारे टूटने लगे और सर्वत्र हाहाकार मच गया। बलि का होश गायब था। वह आतंकित होकर विष्णुकुमार के चरणों में गिर पड़ा और अपने अपराधों के लिये बारंबार क्षमा-याचना करने लगा।

विष्णुकुमार की आज्ञा से वह यज्ञ बंद किया गया और मुनियों की विधिवत् पूजा की गई, धुएँ से उनके कंठ रुँध गए थे, भीषण ज्वालाओं से चमड़ियाँ झुलस गई थीं। उन्हें दूध और सिंवई खिलाई गई। और उनके शरीर के रक्षा के विविध उपाय किए गए। उपस्थित जनता को उपदेश करते हुए आचार्य ने पुनः सबको रक्षा बाँधने की शिक्षा दी। उसी दिन से इस रक्षा का बंधन किया जाता है, इस विश्वास के साथ ही कि "वर्ष भर तक इससे कल्याण की प्राप्ति होती है" राखी का ऐतिहासिक महत्त्व कुछ कम नहीं। रानी कर्मवती ने हुमायूँ को राखी भेजी थी और हुमायूँ ने भी भाई बनकर उसकी रक्षा की थी।

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

जन्माष्टमी

यह पुण्य तिथि भगवान् श्रीकृष्ण की जन्म-तिथि है। प्रति वर्ष भाद्रपद मास की कृष्ण अष्टमी को मनाई जाती है। जब रोहिणी नक्षत्र हो, नक्षत्र न मिलने पर भी अष्टमी तिथि होने से इसे माना जाता है। किंतु उस समय स्मार्तों की जन्माष्टमी पहले दिन और वैष्णवों की जन्माष्टमी दूसरे दिन होती है।

विधि—जन्माष्टमी को पूरा दिन व्रत रखने का नियम है। रात्रि में १२ बजे भगवान् श्रीकृष्ण का जन्मोत्सव मनाया जाता है। इसके लिये प्रातःकाल उठकर स्नानादि से निवृत्त हो व्रत का संकल्प लिया जाता है। केले के खंभे आम अथवा अशोक के पल्लव आदि से घर का द्वार सजाया जाता है। भगवान् श्रीकृष्ण की प्रतिमा को विधि-पूर्वक पंचामृत से स्नान कराकर तथा वस्त्रालंकार आदि से सुसज्जित करके प्रतिष्ठित किया जाता है। जन्म के समय उनके माता-पिता एवं सखा-बंधु का स्मरण करते हुए प्रार्थना की जाती है। उनके दिव्य जन्म एवं कर्म की कथा सुनी जाती है। रात्रि को विशेष रूप से जागरण करने को अत्यंत पुण्यप्रद कहा गया है। बहुधा लोग व्रत में फल का आहार करते हैं। कुछ लोग पूर्ण उपवास करते हैं।

उनकी षष्ठी तथा द्वादशी का भी त्यौहार उसी तरह मनाया जाता हैं जैसे घर में बच्चा होने पर उसकी छट्ठी तथा बरही उत्साहपूर्वक मनाई जाती है। सारे देश में भगवान् श्रीकृष्ण की जन्माष्टमी के अवसर पर और भागवत, सूर सागर आदि में वर्णित उनकी लीलाओं की भव्य झाकियाँ सजाई जाती हैं। मथुरा तथा वृंदावन में झूला-समारोह ज़ोरों से मनाया जाता है जिसमें लाखों की भीड़ होती है।

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

यहाँ श्रीकृष्ण-जन्म-संबंधी वह कथा दी जाती है, जो लोक-प्रसिद्ध है:—

कथा

सतयुग में केदार नाम का एक राजा बड़ा तेजस्वी हो गया है। वह आयु के तीसरे भाग में अपने पुत्र को राज देकर तपोवन में चला गया। इसी राजा की वृंदा नाम की एक कन्या थी, जिसने आजन्म अविवाहिता रहकर यमुना के पवित्र घाट पर घोर तप करना आरंभ किया। जब उसकी तपश्चर्या पराकाष्ठा को पहुँची, तो भगवान् ने प्रकट होकर कहा—'वर माँग।'

कन्या ने हाथ जोड़कर प्रार्थना की—"यदि आप मेरी सेवा से प्रसन्न हैं, तो कृपया मेरा पति होना स्वीकार करें।"

भगवान् ने उसकी प्रार्थना स्वीकार की और उसे अपने साथ ही ले गए। व्रज के जिस वन में राजकुमारी ने तप किया था, उसका नाम वृंदावन पड़ गया।

मधु नाम के एक दैत्य ने यमुना के दक्षिण तट पर एक नगर बसाया था, जिसका नाम मधुपुरी था। इसी मधुपुरी को आजकल मथुरा कहते हैं। रामावतार के समय शत्रुघ्नजी ने इसी मधु दैत्य को परास्त करके मधुपुरी (मथुरा) पर अधिकार प्राप्त किया था। यह मधुपुरी द्वापर युग में शूरसेन देश की राजधानी हो गई और इसमें क्रमशः यादव, अंधक, भोज आदि अनेक वंशों ने राज किया।

द्वापर युग के अंत में मथुरापुरी में भोजवंशीय राजा उग्रसेन राज करता था। उसके पुत्र कंस ने उसे गद्दी से उतार दिया और आप मथुरा का राज्य करने लगा। कंस की एक बहन थी, जिसका नाम देवकी था। देवकी का विवाह

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

वसुदेव-नामक एक यादव-वंशी सरदार के साथ हुआ था।

एक समय जब कि कंस अपनी बहन देवकी को श्वसुर-गृह पहुँचाने के लिये लिवाए जा रहा था, अनायास ही मार्ग में आकाशवाणी हुई—"हे कंस! जिस देवकी को तू बड़े प्रेम से लिवाए जा रहा है, उसी में तेरा काल बसता है। इसी के गर्भ से उत्पन्न हुआ बालक तुझको मारेगा।"

यह सुनते ही कंस म्यान से तलवार निकालकर वसुदेव को मारने चला। देवकी ने पद रख विनीत भाव से प्रार्थना की—"तुम्हें मेरे बच्चे से डर है! मेरे सुहाग को न मिटाओ मैं अपनी हरएक संतान तुम्हारे सामने ला रखूँगी। उनका जो चाहे करना।"

कंस देवकी की बात मानकर मथुरा को वापस चला आया और उसने वसुदेव-देवकी दोनो को कठिन कारागार में क़ैद कर दिया।

जब देवकी के गर्भ से प्रथम बालक जन्मा और वह कंस के सामने लाकर रक्खा गया, तो उसने आठवें गर्भ की बात विचारकर उस बालक को क्षमा कर दिया। किंतु उसी समय नारदजी ने कंस के पास आकर कहा—"राजन्! यह तुम बड़ी भूल कर रहे हो। क्या जाने यही वह आठवाँ गर्भ तुम्हारा नाश करनेवाला हो।"

नारदजी ने पृथ्वी पर आठ लकीरें खींचकर उनको पहले एक सिरे से दूसरे सिरे तक गिना और फिर उस सिरे से पहले सिरे तक गिनाकर प्रमाणित किया कि प्रथम या अष्टम कोई भी अष्टम संख्या का बालक हो सकता है। अतः शत्रु के अंकुर को होते ही खोंट देना चाहिए। ऐसा न हो कि वह बड़ा होकर प्रबल हो जाय।

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

नारदजी की बात मानकर कंस ने फौरन् उस बालक को मरवा डाला। उसके बाद देवकी के गर्भ से जितने बालक हुए, कंस सबको मरवाता गया। देवकी की सात संतानें मारे जाने के बाद जब आठवें गर्भ की बात मालूम हुई, तो कंस ने देवकी वसुदेव दोनो को ऐसे कठिन कारागार में कैद किया कि ये लोग अन्य किसी तीसरे मनुष्य का मुख भी न देख सके। पहरे भी विकट लगाए गए।

जिस दिन श्रीकृष्ण भगवान् का जन्म हुआ, उस दिन भादों के कृष्ण पक्ष की अष्टमी थी। रोहिणी नक्षत्र था। सर्वत्र घोर अंधकार था और मूसलाधार पानी बरस रहा था। जिस कोठरी में देवकी-वसुदेव दोनो कैद थे, उसमें सहसा एक प्रकाश हुआ। उसी प्रकाश में देवकी-वसुदेव दोनो ने देखा कि शंख, चक्र, गदा, पद्म युक्त चतुर्भुज भगवान् उनके सामने खड़े हैं। प्रभु की ऐसी कृपा देखकर देवकी-वसुदेव उनके चरणों पर गिर पड़े। तब भगवान् ने उनसे कहा—"अब मैं नवजात बालक का स्वरूप धारण करता हूँ; परंतु हे वसुदेव! तुम इसी समय मुझे अपने मित्र नंदजी के घर वृंदावन में भेज आओ और उनके यहाँ एक कन्या जन्मी है उसे लाकर कंस को अर्पण कर दो। यद्यपि इस समय प्रकृति ने बड़ा भयानक रूप धारण कर रक्खा है, परंतु तुम किसी की चिंता न करो। मेरी कृपा से जागते हुए पहरेवाले सब सो जायँगे। बंदीखाने के फाटक आप ही आप खुल जायँगे और मार्ग में पड़नेवाली अथाह यमुना नदी भी तुमको मार्ग देदेगी।"

नवजात शिशु-रूप श्रीकृष्ण भगवान् को सूप में रखकर वसुदेव उसी समय बंदीगृह से निकल पड़े। अथाह यमुना को पार करते समय वसुदेव जैसे-जैसे शिशु कृष्ण को जल-

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

स्तर से ऊपर उठाते, यमुनाजी और ऊपर उठतीं। अंत में जब यमुना-जल ने श्रीकृष्ण भगवान् के चरण स्पर्श कर लिए तब घटना शुरू कर दिया। अंत में वह अपने मित्र नंद के घर पहुँचे। मित्र ने भी मित्रता का पालन किया। उन्होंने श्रीकृष्ण को अपनी स्त्री यशोदा को सौंप दिया और यशोदा की पुत्री चंडिका को वसुदेव के सूप में रख दिया। वसुदेव मथुरा वापस चले आए। बंदीखाने के सब किवाड़ ज्यों के त्यों बंद हो गए और उनमें ताले भी पड़ गए। पहरेवाले मोह-निद्रा से जागकर सावधानी से चौकसी करने लगे।

सवेरे जब कंस ने सुना कि मेरी बहन के गर्भ से अब की बार कन्या जन्मी है, तो उसने उसी समय कन्या को मँगाकर एक धोबी को हुक्म दिया कि वह नवजात कन्या पत्थर पर पटक दी जाय। अतः धोबी ज्यों ही चंडिका के पैर पकड़कर उसे पटकने लगा, त्योंही वह धोबी के दोनो हाथों से छूटकर आकाश में उड़ गई। वहाँ से उसने कहा—"रे मूर्ख कंस, मुझको मारने से क्या होगा? तेरा मारनेवाला वृंदावन में जा पहुँचा है।" यह कौतुक देखकर कंस अवाक् रह गया।

कंस कृष्ण को वृंदावन में सुरक्षित जानकर बड़ा ही उद्विग्न हुआ और वह उनको मारने के लिये अनेक उपाय करने लगा। उसने उनका नाश करने के लिये समय-समय पर अनेक दैत्य और दानवियों को भेजा। उन सबने आसुरी माया फैलाकर कृष्ण भगवान् को मारना चाहा, परंतु परिणाम उलटा हुआ। वे सभी मारे गए और कृष्णजी सकुशल गोकुल में रहकर रास करते रहे।

बड़े होने पर श्रीकृष्ण भगवान् ने मथुरा जाकर कंस को मारा; वसुदेव और देवकी को क़ैद से छुड़ाया।

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

९. हरितालिका व्रत या तीज

भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष की तृतीया को हरितालिका अथवा तीज का व्रत मनाया जाता है। यह सौभाग्यवर्द्धक तथा हिंदू स्त्री समाज में अधिक प्रचलित है। इस तिथि को सधवा स्त्रियाँ व्रत रखती हैं, नये वस्त्र धारण करती तथा पुत्रियों, बहिनों आदि को नए वस्त्र देती हैं। स्त्रियों में इस व्रत का बहुत महत्त्व है। महीनों पहले से ही वे उसकी उत्सुकता पूर्वक तैयारी करती हैं।

विधि

हरितालिका पार्वती का व्रत है। भाद्रपद शुक्ल पक्ष की तृतीया को हस्त नक्षत्र में दिनभर निर्जल व्रत रखना चाहिए। बहुधा स्त्रियाँ पूर्व रात्रि में ही सवेरे तीन-चार बजे के करीब उठकर भोजनादि कर लेती हैं और सवेरे उठकर घर को स्वच्छ करती हैं। तिल तथा आँवले का उबटन लगाकर स्नान करती हैं। तदनंतर शिव और पार्वती की मन्त्रोच्चारण पूर्वक प्रतिष्ठा करती तथा इस व्रत के पालन का संकल्प लेती हैं। अपने समस्त पापों के विनाश की प्रार्थना करते हुए कुल, कुटुम्ब एवं पुत्र पौत्रादि के कल्याण की कामना भी करती हैं। संकल्प के पश्चात् गणेश का विधिवत् पूजन, तदनंतर शिव-पार्वती का आवाहन, आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान, वस्त्र उपवीत, तांबूल, कंचुकी, एक छोटा-सा वस्त्र, तथा यथाशक्ति आभूषणादि से षोडशोपचार पूजन करना चाहिए। पूजा की समाप्ति पर पुष्पांजलि चढ़ाकर प्रदक्षिणा और नमस्कार करे। फिर यह कथा सुने और अंत में बाँस की बनी टोकरी या पात्र में मिठाई, वस्त्र, सौभाग्य सामग्री दक्षिणा

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

आदि रखकर आचार्य अथवा पुरोहित को दान करे। तृतीया को पूरे दिन एवं निर्जल व्रत रहकर पूरा जागरण करे फिर दूसरे दिन सवेरे पूजा की समाप्ति पर पारण करे। रात्रि में शिव-पार्वती की कथा कीर्तन एवं स्तुति भी करनी चाहिए।

कथा

एक वार भगवान् शंकर से पार्वती जी ने पूछा—'देव! हमें ऐसा कोई व्रत बताइए जो सभी व्रतों में श्रेष्ठ, तथा अल्प परिश्रम साध्य हो। जिस महान् दान अथवा धर्म के करने से मुझे आपकी प्राप्ति हुई, आप कृपया उसे भी बताइये।' महादेव जी ने कहा--'देवि! जैसे नक्षत्रों में चंद्रमा, ग्रहों में सूर्य, वर्णों में ब्राह्मण, देवताओं में विष्णु, नदियों में गंगा, पुराणों में महाभारत, वेदों में सामवेद तथा इन्द्रियों में मन श्रेष्ठ होता है उसी प्रकार स्त्रियों के लिए सभी व्रतों में हरितालिका का व्रत सर्व-श्रेष्ठ होता है। इसी व्रत के अनुष्ठान तथा पालन से तुमने हमें प्राप्त किया है।'

पार्वती जी ने कहा--'नाथ! मैंने उस व्रत का अनुष्ठान किस प्रकार किया है, कृपया इसे भी बताइए।' पार्वती जी के ऐसा पूछने पर शिव जी ने कहा--'पार्वती! इस भारतवर्ष की उत्तर दिशा में हिमालय नामक पर्वतराज है। उसके चतुर्दिक अनेक नदियाँ, सरोवर, तपोवन तथा सिद्धों के आश्रम हैं। तुमने उसी पर्वत पर रहकर अनेक वर्षों तक कठोर तपस्या की है। वहुत दिनों तक केवल पत्ते खाकर तुमने जीवन बिताया है, इसी से लोग तुम्हारा 'अपर्णा' नाम भी कहते हैं। बारह वर्षों तक तुमने अधोमुख होकर अग्नि का धूम्र-पान किया था। वैशाख मास में अग्नि का सेवन किया था तथा माघ के शीतल दिनों में तुमने जल में निवास किया था। तुम्हारी इस कठोर

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

तपस्या से तुम्हारे पिता हिमालय को बड़ी चिन्ता हो रही थी। इसी बीच एक दिन देवर्षि नारद उनके समीप आए और उनसे कहा --'पर्वतराज ! मैं भगवान् विष्णु के साथ विवाह करने के लिए तुम्हारी कन्या को माँगने आया हूँ।'

हिमालय को देवर्षि नारद की बातों से बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होंने गद्गद् वाणी में कहा--'देवर्षि ! यदि स्वयं भगवान् मेरी कन्या का बरण करना चाहते हैं तो इससे बढ़कर मेरे लिए दूसरी कोई सौभाग्य की बात नहीं है। मैं अपनी स्वीकृति देता हूँ।' नारद जी हिमालय की स्वीकृति लेकर विष्णुलोक चले गए और भगवान् विष्णु से सब हाल कह सुनाया। भगवान् विष्णु थोड़ी देर तक कुछ विचारते रहे। फिर गंभीर स्वर में बोले—

'देवर्षि ! हिमालय की कन्या पार्वती भगवान् शिव की अंगभूत हैं। उनका पूर्व जन्म में दाक्षायणी सती नाम था। इस जन्म में भी वह शिव जी को ही प्राप्त करने के लिए कठोर तपस्या कर रही हैं मेरे संग उनका विवाह होना उचित नहीं होगा। किंतु अभी पार्वती की तपस्या पूरी नहीं है, उन्हें अभी और कठोर तपस्या करनी होगी।'

देवर्षि नारद जी ने पार्वती के समीप जाकर उनसे कहा कि—'आपका यह सुन्दर शरीर वन में तपस्या करने योग्य नहीं है। आप क्यों व्यर्थ में अपना शरीर गला रहीं हैं। पर्वतराज की पुत्री होकर ऐसा उग्र तप करने का आपका क्या तात्पर्य है।' पार्वती जी ने नारद से कहा—'मैं पति रूप में भगवान् शंकर को प्राप्त करने के लिए ही यह कठोर तप कर रही हूँ।' देवर्षि नारद ने पार्वती को बहुत कुछ भड़काने का प्रयत्न किया और शिव के प्रति उनकी कितनी निष्ठा है जानने के लिये उनकी परीक्षा भी ली। पार्वती जी नारद की परीक्षा

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

में सब प्रकार से खरी उतरीं। उनकी प्रतिज्ञा यही थी कि या तो पति रूप में शिवजी की प्राप्ति होगी अथवा जीवन भर कुमारी रहेंगी।

देवर्षि नारद के चले जाने पर हिमालय स्वयं अपनी पुत्री पार्वती को घर लिवा जाने के लिए आए, और भगवान् विष्णु से उनके विवाह होने की चर्चा की, किंतु पार्वती अपने निश्चय से नहीं डिगीं। निराश होकर जब हिमालय वापस लौट गए तब पार्वती जी ने अपनी सखी से अपने मन की व्यथा बताते हुए कहा – 'यदि पति रूप में शंकर जी मुझे नहीं मिलते तो मैं अपने प्राण दे दूंगी।' सखी ने पार्वती को आश्वासन दिया और कहा--'यदि ऐसा ही है तो किसी दूसरे वन में चलकर तपस्या करो। एक न एक दिन तुम्हारे कठोर तप से प्रसन्न होकर शंकर जी तुम्हें लेने के लिए अवश्य आएँगे।'

पार्वती जी दूसरे वन में जाकर कठोर तप में लग गईं। वहाँ उन्होंने बालुका का शिव लिंग बनाकर भाद्रपद की इसी शुक्ल तृतीया को उनका विधिवत् पूजन किया। पार्वती की कठोर तपस्या देवताओं की चिन्ता का विषय बनी हुई थी। देवताओं की प्रेरणा से शंकर जी को पार्वती को अनुगृहीत करने का निश्चय करना ही पड़ा। उन्होंने पार्वती से बरदान माँगने के लिए कहा। पार्वती ने कहा--'नाथ ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे पत्नी रूप में अंगीकार करें।' शिवजी बोले- 'देवि ! तुम्हारी साधना पूरी हुई। मैं तुम्हें अर्धांगिनी बनाना स्वीकार करता हूँ।'

भगवान् शंकर की स्वीकृति के साथ ही आकाश से देवताओं ने पारिजात पुष्पों की वृष्टि की। अप्सराओं ने नृत्य और गंधर्वों ने गायन किए। हिमालय को पार्वती की इस सफलता का जब संवाद मिला तो वे फूले नहीं समाये। बहुत

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

दिनों से वह, पार्वती को ढूँढ़ने में परेशान हो रहे थे, किंतु कहीं भी उनका पता नहीं लग रहा था। फिर तो भगवान् शंकर के साथ पार्वती जी का बड़ी धूमधाम से विवाह हुआ। सभी देवता बराती बने थे। शिव के गणों के विविध रूपों को देखकर हिमालय पुरवासी चकित हो उठे। मंगल मुहूर्त में पार्वती का परिणय शंकर जी के साथ संपन्न हो गया।

'पार्वती को उनकी सखियों ने जिस तिथि को हिमालय के आवास से हरण किया था (बहकाकर दूसरे तपोवन में ले गई थीं, तथा जिस दिन उन्हें शिवजी ने वरदान दिया था वह तिथि 'अलिभिः' (सखियों से) 'हरिता' (हरण की गई) होने के कारण हरितालिका के नाम से प्रसिद्ध हुई।'

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

१०. गणेश चतुर्थी

गणेश हिन्दुओं के आदिम देवता हैं। यद्यपि यह भगवान् शंकर और पार्वती के पुत्र कहे जाते हैं, तथापि उनकी पूजा और प्रतिष्ठा सबसे पुरानी है। सनातनधर्मी व्यक्ति के पञ्च देवताओं गणेश, विष्णु, शङ्कर, सूर्य और भगवतीदेवी में गणेश प्रमुख हैं। इनमें सबसे प्रथम गणेशजी की पूजा की जाती है। हिन्दुओं के घरों में चाहे जो पूजा हो, सबसे पहले गणेशजी का आवाहन और पूजन किया जाता है। गणेशजी का उल्लेख वेदों में भी है और पुराणों में तो इनकी अनेक कथाएँ हैं। इनकी कथाओं से भरे तीन उपपुराणहैं— मुद्गल पुराण, गणेश पुराण और गणेश भागवत। अठारहो महापुराणों में से अनेक में गणेशजी की मनोरंजक कथाएँ कही गई हैं।

गणेशजी विघ्नों को दूर करनेवाले देवता हैं। इनका मुख हाथी का है, उदर लम्बा तथा शेष शरीर साधारण मनुष्य के समान है। भूत-प्रेतगण इनके सेवक हैं। मोदक इन्हें विशेष प्रिय है। भक्तों के विशुद्ध हृदय प्रार्थना करने पर वह द्रवित हो उठते हैं। इनके एक ही दाँत है। ऋद्धि-सिद्धि इनकी सेवा में रहती हैं।

शुभ कार्यों में गणेशजी की स्तुति का अत्यन्त महत्त्व माना गया है और यहाँ तक कि हमारे देश में किसी भी कार्य के आरम्भ करने को 'श्री गणेश करना' बताया गया है। विद्यारम्भ, विवाह, गृहप्रवेश, परदेश-गमन, संग्राम अथवा संकट के क्षणों में गणेशजी स्मरण का विशेष महत्त्व बताया गया है। उत्तर भारत में गणेशजी की पूजा-प्रतिष्ठा उतनी नहीं होती, जितनी दक्षिण भारत तथा महाराष्ट्र-समाज में होती है। महाराष्ट्र में गणेश-पूजा एक राष्ट्रीय पर्व के रूप में प्रतिष्ठित है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

गणेशजी की पूजा यों तो प्रत्येक महीने की कृष्ण एवं शुक्ल पक्ष की दोनों चतुर्थी तिथियों को की जाती है और प्रत्येक चतुर्थी का नाम गणेश चतुर्थी है, किन्तु माघ, श्रावण, मार्गशीर्ष और भाद्रपद की कृष्ण एवं शुक्ल चतुर्थी को इसका विशेष महत्त्व बताया गया है। माघ की कृष्ण चतुर्थी का भी नाम संकट-चतुर्थी है।

विधि

भाद्रपद शुक्ल मास की चतुर्थी को प्रातःकाल स्नानादि नित्य कर्मों से निवृत्त होकर अपनी शक्ति के अनुसार सोने, चाँदी, ताँबे, मिट्टी अथवा गोबर से गणेश-प्रतिमा बनाए या बनवा ले फिर नूतन कलश में जल भरकर उसके मुख को नूतन वस्त्र से ढँककर उसी पर गणेश-प्रतिमा स्थापित करे। तदनन्तर पुराणों में वर्णित गणेशजी की गजानन, लम्बोदर मूर्ति का ध्यान करते हुए षोडशोपचार पूजन करे। आवाहन, आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान, वस्त्र, गन्ध, पुष्पादि चढ़ाते हुए गणेश को नमस्कार करे और अंग-पूजा करे। इस अंग-पूजा में पाद, जंघा, उरु, कटि, नाभि, उदर, स्तन, हृदय, कण्ठ, स्कन्ध, हाथ, मुख, ललाट, शिर आदि सर्वांग का पूजन करे तथा धूप, दीप, नैवेद्य, आचमन, ताम्बूल और दक्षिणा के पश्चात् आरती करके नमस्कार करे।

पूजा के अवसर पर इक्कीस दूर्वा-दल भी रक्खे और गणेश जी के निम्न-लिखित दस नामों का पवित्र हृदय से उच्चारण करते हुए नमस्कार करे और प्रत्येक नाम के नमस्कार के अनन्तर दो दूर्वा-दल चढ़ा दे। वे दस नाम ये हैं:—(१) गणाधिप, (२) उमापुत्र, (३) अघनाशन, (४) विनायक, (५) ईशपुत्र, (६) सर्वसिद्धिप्रद, (७) एकदन्त, (८) इभवक्तन, (९) मूषक-

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

वाहन तथा (१०) कुमार गुरु। इस प्रकार बीस दूर्वादलों का समर्पण कर शेष एक दूर्वा दसों नामों का स्मरण करके चढ़ा दे। इसी प्रकार इक्कीस लड्डू भी गणेश-पूजन में आवश्यक होते हैं। इनमें से पाँच लड्डू मूर्ति पर चढ़ाए और पाँच ब्राह्मण को दे दे। शेष को स्वयं ले ले तथा परिवारवालों में बाँट दे।

पूजन की यह विधि चतुर्थी के मध्याह्न में करे। फिर संध्या के समय जब चंद्रमा का उदय हो जाय तो बिना चंद्र-दर्शन किए हुए ही चंद्रमा का यथाविधि पूजन कर अर्घ्य प्रदान करे। तदनन्तर ब्राह्मणों को भोजन कराकर दक्षिणा दे और तब मौन होकर उन्हीं लड्डुओं का भोजन करे। उसके बाद वस्त्र से आच्छादित कलश और गणेशजी की मूर्ति को यथाशक्ति दक्षिणा-समेत आचार्य को दान करते हुए गणेश-पूजा का विसर्जन करे। पूजा के बाद गणेशजी की कथा श्रवण करना कल्याणकारी होता है।

कथा

कैलाश-शिखर पर निवास करते समय एक बार शंकरजी ने पार्वती को अकेला छोड़कर भोगावती पुरी के लिए स्नान के निमित्त प्रस्थान किया। शिवजी के चले जाने के बाद पार्वतीजी ने इस विचार से कि कोई परकीय पुरुष आश्रम में न आ जाय, अपने शरीर के मैल से एक पुतला बनाया और उसे अमृत सिंचित जल में डालकर सजीव बना लिया। पार्वतीजी की कल्पना के अनुसार वह पुतला एक दुर्दान्त गण के रूप में बदल गया। तब पार्वतीजी ने उसे आज्ञा दी—'पुत्र! तुम मुग्दर लेकर आश्रम के द्वार पर बैठो। जब तक मैं आज्ञा न दूँ कोई भी पुरुष भीतर न आने पावे।'

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

पार्वतीजी स्नान करके शिवजी के लिए भोजन तैयार करने में लग गईं। उधर संयोग से शंकरजी भोगावती से स्नान करके अपने आश्रम में प्रविष्ट होने लगे। द्वार पर नियुक्त पार्वतीजी के गण ने शंकरजी का मार्ग रोक दिया और उनसे कहा कि जब तक माता की आज्ञा नहीं हो जाती, मैं आपको भीतर नहीं जाने दूँगा। अपने ही आश्रम में इस प्रकार अपने को अपमानित होता देखकर शंकरजी अत्यन्त क्रुद्ध हो गए। उन्होंने उसका शिर काट डाला और क्रोध से भरे हुए आश्रम में प्रवेश किया। पार्वती जी ने शंकरजी को क्रोधित देखकर अनुमान लगाया कि शायद भूख के कारण विलम्ब हो जाने से शंकरजी इस प्रकार अप्रसन्न हो गए हैं। वह झटपट रसोई में चली गईं और दो थालें परोस कर ले आईं। दो पात्रों में भोजन परोसा हुआ देखकर शंकरजी ने पूछा--"यह दूसरा भोजन-पात्र किसके लिए लाई हो।"

पार्वतीजी ने उक्त गण की उत्पत्ति को बताते हुए कहा—"बेचारा बड़ी देर से भूखा-प्यासा द्वार पर रखवाली कर रहा है। यह दूसरी थाली उसी के लिए लाई हूँ।"

शंकरजी ने कहा--"उसे तो मैंने मार डाला है। वह अत्यन्त मूर्ख तथा दुराग्रही था। बहुत समझाने-बुझाने पर भी उसने मुझे आश्रम में नहीं घुसने दिया।"

पार्वतीजी को उसके मारे जाने की बात सुनकर बड़ा दुःख हुआ। उसे वह अपना पुत्र मान चुकी थीं। उसकी मृत्यु से विह्वल होकर वह बोलीं—"नाथ! इसमें उसका क्या अपराध था? मैंने उसे ऐसा करने की आज्ञा दी थी। आप उसे अभी सजीव करेंगे, तभी मैं जीवन धारण करूँगी।"

शंकरजी निरुपाय थे। पार्वतीजी के कथन में सत्य का बल था। उन्हें विवश होकर पार्वती की इच्छा-पूर्ति करनी पड़ी।

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

अपने एक गण को उन्होंने आज्ञा दी—"जाओ, जो भी मिले उसका शिर काट कर ले आओ। वही शिर जोड़कर इसे जीवित करूँगा।" शिव की आज्ञा से ज्यों ही गण बाहर गया, उसे वन में एक घूमता हुआ एक हाथी दिखाई पड़ा। उसने हाथी का शिर काट कर शिवजी को ला दिया। अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार शिवजी को उसी हाथी के शिर से पार्वती-जी के उस कल्पित पुत्र को पुनर्जीवन दान करना पड़ा। हाथी का शिर लगते ही वह जीवित हो उठा। पार्वतीजी अपने पुत्र को जीवित देखकर बड़ी प्रसन्न हुईं। उन्होंने दोनों को साथ ही भोजन कराया और उसे अपने पुत्र के रूप में स्वीकार कर शिवजी के द्वारा समस्त गणों का स्वामी बनवा दिया। तभी से उसका नाम गणेश अथवा गणाधिपति, गणपति, गजानन, वक्रतुण्ड आदि पड़ गया। कहते हैं, यह घटना भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी को घटित हुई थी। तभी से गणेशजी की पूजा की यह पवित्र तिथि हिन्दू-जाति के लिये एक पव बन गई।

दूसरी कथा

इस चतुर्थी की प्रसिद्धि हिन्दू-समाज में एक दूसरे कारण से भी है। इस तिथि के चंद्रमा को देखना निषिद्ध माना गया है। धम-शास्त्रों का कथन है कि जो व्यक्ति इस चतुर्थी का चंद्रमा देखता है, उसे वर्ष-भर के भीतर ही कोई-न-कोई कलंक अवश्य लगता है। एक बार भगवान् श्रीकृष्ण को भी यह कलंक लगा था। हिन्दू-समाज में 'चौथ का चाँद' एक मुहावरा बन गया है, और जब कभी किसी व्यक्ति को अनायास कोई कलंक लगता है तो इसका प्रयोग करते हुए कहा जाता है कि उसने 'चौथ का चाँद देखा' होगा। इसी चतुर्थी को 'ढेला चौथ' भी कहते हैं। रात के समय एक दूसरे के मकान पर ढेला

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

मारते हैं और गाली सुनते हैं। इस कुप्रथा का कोई शास्त्रीय उल्लेख नहीं मिलता। यह एक अन्ध परम्परा है, जिसका परित्याग करना ही उचित है।

द्वारकापुरी में सत्राजित्-नामक एक यदुवंशी सामंत ने भगवान् सूर्यनारायण की आराधना करके वरदान के रूप में एक ऐसी मणि प्राप्त की, जो चंद्रमा के समान प्रकाशवान् थी। यही नहीं, वह प्रतिदिन बहुत सोना पैदा करती थी। एक दिन वह उक्तमणि पहनकर राजा उग्रसेन के दरबार में गया, जहाँ अपने मित्रों के साथ भगवान् श्रीकृष्ण भी मौजूद थे। अपने मित्रों के कहने पर इच्छा न रखते हुए भी भगवान् श्रीकृष्ण ने सत्राजित् से उक्त मणि अपने लिए माँगी। किन्तु सत्राजित् अपने प्राण दे सकता था, मणि देना उसे किसी भी दशा में स्वीकार न था। उसके इनकार करने पर भगवान् श्रीकृष्ण को बड़ी ग्लानि हुई कि व्यर्थ ही ज़बान ख़राब की। और उधर सत्राजित् भगवान् श्रीकृष्ण के प्रभाव से ऐसा डर गया कि दरबार में आना ही बन्द कर दिया। उसे भय हो गया था कि कहीं इस मणि के पीछे मेरे प्राण न चले जायँ।

सत्राजित् का भाई प्रसेनजित् वीर सरदार था। उसने सत्राजित् को निर्भय किया और कहा कि—"मणि मुझे दे दे, अब से यह मेरे पास रहेगी। श्रीकृष्ण मेरा कुछ नहीं कर सकते।' सत्राजित् ने मणि अपने भाई को दे दी। भगवान् श्रीकृष्ण मणि की बात भूल चुके थे। एक दिन प्रसेनजित् वही मणि पहन कर वन में शिकार खेलने के लिए गया और बहुत दिनों तक वापस नहीं लौटा। वन में एक सिंह ने उसे मार डाला था और मणि ले ली थी। किन्तु उस सिंह को भी मारकर जाम्बवान-नामक रीछ ने मणि छीन ली थी, क्योंकि उसकी अँधेरी गुफा में प्रकाश के लिए वह प्रकाश करनेवाली

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

मणि बड़े काम की चीज़ थी और उसकी एकलौती पुत्री जाम्बवती के लिए एक अच्छे खिलौने के रूप में उपयुक्त थी।

इधर जब बहुत दिन बीत गए और प्रसेनजित् घर वापस न आया, तो सत्राजित् ने दुःखी होकर चारों ओर यह प्रवाद फैला दिया कि श्रीकृष्ण ने मणि के लोभ से हमारे भाई को मरवा दिया है। प्रसिद्ध लोगों के विरुद्ध प्रवाद बड़ी जल्दी फैलता है। श्रीकृष्ण से द्वेष करनेवालों की संख्या कम नहीं थी। जिन्हें उनके बढ़ते हुए प्रभाव और ऐश्वर्य से जलन होती थी, उन सबने श्रीकृष्ण के विरुद्ध यह प्रवाद ख़ूब फैलाया। चर्चा बढ़ते-बढ़ते श्रीकृष्ण के कानों में भी पड़ी। वह बहुत चिन्तित हो गए। भरे दरबार में मणि माँगकर उन्होंने जो अनुचित कार्य किया था, उसका प्रायश्चित्त तो उन्हें भोगना ही था।

जब बदनामी बहुत बढ़ने लगी, तो श्रीकृष्ण अपने कुछ मित्रों के साथ प्रसेनजित् को ढूँढ़ने के लिये उसी वन में गये, जिसमें शिकार खेलने के लिए प्रसेनजित् गया था। बीच वन में एक सिंह की विकृत लाश के समीप उन्होंने प्रसेनजित् को भी मरा हुआ पाया। भगवान् श्रीकृष्ण को यह समझने में देर न लगी कि किसी अत्यन्त बलवान् पशु ने सिंह को मारकर मणि ले ली है। कई दिनों तक वन में वह उस बलवान् पशु का पता लगाते रहे; अन्त में जाम्बवान् की अँधेरी गुफा में चाँदनी की तरह प्रकाश देखकर वह समझ गए कि मणि इसी गुफा में है। अपने मित्रों को गुफा के द्वार पर बैठाकर भगवान् श्रीकृष्ण अकेले ही उस गुफा में प्रविष्ट हुए। कुछ दूर जाने पर उन्होंने देखा कि एक परम सुन्दरी कन्या उस मणि से खेल रही है। श्रीकृष्ण को देखते ही वह कन्या चिल्ला उठी। चिल्लाहट सुनकर जाम्बवान् चिंग्घाड़ते हुए भगवान् श्रीकृष्ण के ऊपर टूट पड़ा। द्वंद युद्ध मच गया। दोनों ही-

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

परम योद्धा थे, कोई किसी से हार माननेवाला न था।

इधर गुफा-द्वार पर बैठे हुए श्रीकृष्ण के साथियों को जब आठ दिन बीत गए, तब वे निराश और दुखी होकर द्वारकापुरी वापस आ गए। भगवान् श्रीकृष्ण के गुफा में विलुप्त होने का दुःसंवाद द्वारकापुरी में बिजली के समान फैल गया। लोग सत्राजित् की अनेक प्रकार से निन्दा करने लगे। उधर जाम्बवान् का भगवान् श्रीकृष्ण से इक्कीस दिनों तक भयंकर युद्ध चलता रहा। बाईसवें दिन उसे ध्यान आया कि ऐसा पराक्रम किसी मनुष्य में नहीं हो सकता। अवश्य ही यह कोई अवतारी महापुरुष हैं। उसने भगवान् श्रीकृष्ण की अभ्यर्थना की और अपनी कन्या जाम्बवती के साथ वह मणि भी उन्हें समर्पित कर दी। मणि लेकर भगवान् श्रीकृष्ण जब द्वारकापुरी वापस आए तो समूची द्वारकापुरी आनंदित हो उठी। बेचारे सत्राजित् ग्लानि में गले जा रहे थे। जब भगवान् श्रीकृष्ण अपने मित्रों के साथ मणि देने के लिए उनके पास पहुँचे तो वह उनके चरणों पर गिरकर क्षमा-याचना करने लगे और अपनी पुत्री सत्यभामा के साथ वह मणि श्रीकृष्ण के चरणों में अर्पित कर देना चाहा। किन्तु भगवान् श्रीकृष्ण सहमत नहीं हुए। केवल सत्यभामा को स्वीकार किया और मणि सत्राजित् के पास रहने दी।

मणि का नाम था स्यमन्तक। एक बार भगवान् श्रीकृष्ण द्वारकापुरी से हस्तिनापुर गए हुए थे। इसे अच्छा अवसर समझ कर शतधन्वा नामक प्रबल यादव ने अपने मित्रों के परामश पर सत्राजित को मारकर वह मणि छीन ली। शतधन्वा इतना प्रबल तथा पराक्रमी था उसका सामना कोई नहीं कर सका। जब भगवान् श्रीकृष्ण को हस्तिनापुर में यह समाचार मिला, तो वह द्वारकापुरी वापस आए। उन्हें सत्राजित् के मारे जाने

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

और मणि लूटने के समाचार से बहुत दुःख हुआ। द्वारकापुरी पहुँचकर उन्होंने शतधन्वा पर चढ़ाई कर दी। उस मणि को भगवान् श्रीकृष्ण के बड़े भाई बलराम जी भी बहुत चाहते थे। उन्होंने भी चढ़ाई में भगवान् श्रीकृष्ण का साथ दिया। किन्तु उधर शतधन्वा को जब यह समाचार मिला, तो वह घर छोड़कर भाग खड़ा हुआ। मणि को उसने अक्रूर नामक यादव को दे दिया। किन्तु भगवान् श्रीकृष्ण के हाथों से बचना सरल न था। वह थोड़ी ही दूर भागा होगा कि उसे पकड़ लिया गया किन्तु जब उसकी तलाशी ली गई, तो मणि न निकली। बलराम जी भगवान् श्रीकृष्ण से कुछ पीछे थे। जब उन्हें मणि के न मिलने का समाचार मिला तो उन्होंने यह अनुमान लगाया कि कृष्ण ने लोभ के कारण उसे छिपा दिया है। श्रीकृष्ण को वह जली-कटी सुनाने लगे। यही नहीं, वह इतने रूठ गए कि द्वारकापुरी छोड़कर बाहर जाने को उद्यत हो गए। श्रीकृष्ण पर यह नई विपदा आई। उधर मणि का कहीं कुछ पता ही नहीं लग रहा था।

बलराम जी जब रूठकर द्वारकापुरी छोड़कर विदर्भ चले गए, तब श्रीकृष्ण की बड़ी अप्रतिष्ठा हुई। एक बार पुनः उनकी निन्दा से द्वारकापुरी गूँज गई। किन्तु वह करते ही क्या ? मन-ही मन ग्लानि से दबते जा रहे थे। इसी बीच देवर्षि नारद जी उनसे मिलने के लिए द्वारकापुरी आए। भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने मन की व्यथा उन्हें बताई। नारदजी त्रिकालदर्शी महापुरुष थे। उन्होंने मणि को अक्रूर के पास होने की सूचना दी और यह भी कहा कि--"आपने भाद्रपद शुक्ल पक्ष का चंद्रमा देखा था, जिसके कारण यह कलंक लगा है।" नारदजी यह चर्चा कर ही रहे थे कि अक्रूर ने वह मणि लाकर भगवान् श्रीकृष्ण को भेंट कर दी।

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

भगवान् श्रीकृष्ण को चंद्रमा देखने से कलंक लगने की बात सुनकर बड़ा विस्मय हुआ। उन्होंने नारदजी से पूछा कि—"देवर्षि! चंद्रमा धरती का भूषण है। उसे देखने से कलंक क्यों लगता है?" तब नारदजी ने उन्हें बताया कि—"एक बार गणेशजी ब्रह्मलोक से चंद्रलोक में होते हुए लौट रहे थे। उनके तुन्दिल शरीर और गजमुख को देखकर चंद्रमा को हँसी आ गई। गणेशजी को चंद्रमा की इस हँसी से बड़ा क्रोध आया और उन्होंने चंद्रमा को शाप दे दिया—"पापी! जो कोई तेरा मुख देखेगा, उसे कलंक लगेगा।" चंद्रमा इस शाप को सुनकर बहुत दुःखी हुए। देवताओं को भी इससे बड़ी चिन्ता हुई; क्योंकि चंद्रमा को देखे विना धरती पर कोई काम ही नहीं हो सकता था। सब देवता मिलकर चंद्रमा के साथ ब्रह्माजी के पास गए, और चंद्रमा को शाप-मुक्त करने की विनम्र प्रार्थना की। पितामह ब्रह्मा ने चंद्रमा को गणेश व्रत करके गणेशजी को प्रसन्न करने की सम्मति दी। निरुपाय चंद्रमा ने सच्चे हृदय से गणेशजी का व्रत किया। गणेशजी प्रसन्न हो गए और बोले--"वर्ष भर में एक दिन--भाद्रपद की शुक्ल चतुर्थी को जो तुम्हें देखेगा, उसी को कलंक लगेगा, दूसरे दिन नहीं।

देवर्षि नारदजी ने यह कथा सुनाकर भगवान् श्रीकृष्ण से कहा कि--"आज से जो लोग आपको दो बार कलंक लगने की यह कथा सुनेंगे, उनको भाद्रपद की शुक्ल चतुर्थी को चंद्रमा देखने से कलंक नहीं लगेगा।"

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

११. ऋषि-पंचमी

भाद्रपद मास की शुक्ल पंचमी को ऋषि-पंचमी भी कहते हैं। इसी तिथि को यह व्रत रक्खा जाता है। इस व्रत को स्त्रियाँ ही करती हैं, किंतु यदि किसी कारणवश स्त्री व्रत नहीं कर सकती तो उसकी एवज में पति इसे कर सकता है। इस व्रत का बिधान स्त्रियाँ अपने जान या अनजान में किए गए पाप-कर्मों की शांति अथवा प्रायश्चित्त के लिए करती हैं। शास्त्रों का कथन है इसके पुण्य से सब पाप नष्ट हो जाते हैं।

विधि

इस व्रत का अनुष्ठान इस प्रकार किया जाता है। मध्याह्न के समय किसी नदी या जलाशय पर जाकर अपामार्ग (चिड़चिड़े) की १०८ अथवा केवल ८ दातून करे। तदनंतर मिट्टी से स्नान करके पंचगव्य का पान करे। पुरुष हवन के अनंतर पंचगव्य प्राशन करे और स्त्री केशव, माधव, हृषीकेष को नमस्कार करके पंचगव्य प्राशन करे। तदनंतर स्नान करके घर आवे और एक वेदी बनाकर उसे गोबर से लीप दे। उस पर अनेक रंगों से सर्वतोभद्र मंडल बनाकर मिट्टी या ताँबे का कलश स्थापित करे। कलश के ऊपर जौ से भरा हुआ एक पात्र और रखे। उसमें पंचरत्न, अक्षत, फूल, गंध आदि छोड़े तथा वस्त्र से उसे गले तक ढँक दे। उसके बाद वेदी पर अष्टदल कमल बनाकर सातों ऋषियों का पूजन करे। अरुन्धती-समेत सातों ऋषियों के नाम ले-लेकर उनको नमस्कार करे अथवा उनके मंत्रों का उच्चारण करके उनका विधिवत् पूजन करे। सातों ऋषियों के नाम इस प्रकार हैं:—
(१) गौतम, (२) भरद्वाज, (३) विश्वामित्र, (४) जमदग्नि,

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

(५) वशिष्ठ, (६) कश्यप, (७) अत्रि। इन सातों ऋषियों तथा अरुन्धती के आवाहन से लेकर ताम्बूलादि समर्पण तक षोडशोपचार पूजन करने के बाद पूजा में चढ़ाई गई मिठाइयाँ तथा पकवान ब्राह्मण को दान करे और स्वयं ऋषि-अन्न अर्थात् नीवार (तिन्नी) चावल को खाए अथवा केवल फलाहार करे। रात्रि में ऋषि-पंचमी की कथा श्रवण करते हुए जागरण करे तथा दूसरे दिन प्रातःकाल अग्नि की प्रतिष्ठा कर अपनी त्रुटियों के लिए क्षमा प्रार्थना करे। इस व्रत की अनेक कथाएँ प्रचलित हैं, किन्तु यहाँ केवल एक कथा जो कही व सुनी जाती है दी जा रही है। ब्रह्मपुराण में अनेक कथाओं का वर्णन है जो सब यहाँ पर देना संभव नहीं।

कथा

विदर्भ देश में एक ब्राह्मण रहा करता था। उसकी पत्नी बड़ी पतिव्रता थी। उसके केवल २ संतान थी। एक पुत्र और एक पुत्री। पुत्र अत्यंत कुशाग्र बुद्धि था, अतः थोड़ी ही आयु में संपूर्ण वेद-शास्त्रों का अध्यन कर पूर्ण ज्ञानी हो गया। पुत्री सुशीला का विवाह भी एक संपन्न घर में हुआ किंतु पूर्व-जन्म कर्मानुसार तरुण आयु में ही विधवा हो गई। इस दुःख से कातर होकर उसके माता-पिता उसे लेकर गंगा किनारे बस गये धर्म-चर्चा के अतिरिक्त ब्रह्मचारियों को वेद आदि पढ़ाने का क्रम यहाँ भी रहा। एक दिन सोती हुई कन्या के शरीर में कीड़े पड़ गये। कन्या ने अपनी माता से यह कष्ट कहा। माता ने अत्यंत दुखी होकर अपने पति से अपनी साध्वी कन्या के कष्ट के संबंध में पूँछा। तब पिता ने समाधिस्थ होकर घटना इस प्रकार बतलाई 'पूर्व जन्म में यह कन्या ब्राह्मणी थी। इसने रजस्वला अवस्था में अपने वर्तनों का स्पर्श किया। धर्म शास्त्रों के

C-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

अनुसार :--

प्रथमेऽहनि चांडाली द्वितीये ब्रह्मघातिनी।
तृतीये रजकी प्रोक्ता चतुर्थेऽहनि शुद्धिवति ॥

रजस्वला स्त्री प्रथम दिन चाण्डालिनी, दूसरे दिन ब्रह्मघातिनी और तीसरे दिन धोबिनके समान अपवित्र रहती है और चौथे दिन शुद्ध होती है। इसके अतिरिक्त उसी जन्म में इससे एक और अपराध हो गया था। इसने अन्य स्त्रियों को ऋषि-पंचमी करते देख उसकी अवहेलना की। इन्हीं कारणों से इसके शरीर में कीड़े पड़े हैं। उक्त व्रत के अवलोकन मात्र से इसे ब्राह्मण कुल में पुनः जन्म लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, अन्यथा दोनों दोषों के फल-स्वरूप उसे किसी चाण्डाल के घर जन्म लेना चाहिये था।

ऋषि-पंचमी का व्रत सब व्रतों में प्रधान है क्योंकि इसी के प्रभाव से स्त्री सौभाग्य-संपन्न रहती है, तथा रजस्वला होने की अवस्था में अज्ञान पूर्वक हुये दोषों से मुक्त हो जाती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Gra

१२. अनंत चतुर्दशी

भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष को यह व्रत होता है। स्नानादि के पश्चात् अक्षत, दूर्वा तथा शुद्ध सूत से बने और हल्दी से रंगे हुए चौदह गाँठ के अनन्त को सामने रखकर हवन किया जाता है। तत्पश्चात् अनन्तदेव का ध्यान करते हुए निम्न-लिखित मंत्र पढ़कर शुद्ध अनन्त को अपनी दाहिनी भुजा में बाँधते हैं। इस व्रत में प्रायः एक समय अलोना (विशेषतः सिमई का) भोजन किया जाता है।

अनन्त संसार महासमुद्रे मग्नं समभ्युद्धर वासुदेव।
अनन्त रूपे विनियोजयस्व ह्यनन्तसूत्राय नमो नमस्ते॥

कथा

शकुनि के छल द्वारा दुर्योधन से जुए में राज-पाट हार जाने के बाद युधिष्ठिर जब अपने भाइयों तथा पत्नी द्रौपदी के साथ १२ वर्ष का बनवास भोग रहे थे, तो एक दिन उनके आश्रम में भगवान् श्रीकृष्ण आये। दुःख की उस वेला में भगवान् श्रीकृष्ण के इस आकस्मिक दर्शन से पाण्डव बड़े प्रसन्न हुए। वार्तालाप के बीच युधिष्ठिर ने भगवान् से अपनी इन विपत्तियों से छुटकारा पाने का जब उपाय पूछा तब भगवान् ने उन्हें इसी अनंत व्रत को पूरा करने का उपदेश दिया। इस व्रत का माहात्म्य बतलाते हुए भगवान् ने कहा—'युधिष्ठिर! सतयुग में सुमन्त नामक एक ब्राह्मण था। उसके शीला नाम की एक कन्या थी। सुमन्त की पहली पत्नी का जब देहान्त हो गया तो उसने अपना दूसरा विवाह कर लिया। दुर्भाग्यवश शीला की उसकी विमाता से नहीं पटी, क्योंकि विमाता अत्यंत कर्कशा व ईर्ष्यालु थी। शीला भगवान् में भक्ति

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

रखती थी। जब वह बड़ी हुई तो उसका कौंडिन्य नामक एक योग्य-ब्राह्मण कुमार से विवाह हुआ। बिदाई के समय विमाता ने शीला को कुछ छोटी-मोटी सामग्रियाँ ही दी थीं। मार्ग में पति के साथ जाते हुए उसने नदी के तट पर कुछ स्त्रियों को अनंत का व्रत करते हुए देखा। उसके हृदय में भक्ति तो थी ही, उन स्त्रियों से पूछकर उसने भी इसका विधिवत् अनुष्ठान किया। भगवान् की कृपा से थोड़े ही दिनों में शीला का घर धन-धान्य से भर गया। शीला अनंत के उस धागे को अपनी भुजा में छिपाकर बांधे रहती थी।

संयोग-वश एक दिन कौंडिन्य ने पत्नी की भुजा में उस साधारण धागे को बँधा देखकर पूछा कि इतने आभूषणों के होते हुए भी तुमने सूत का धागा क्यों बाँध रखा है? यह तेरी सुन्दर भुजाओं में मुझे तनिक भी अच्छा नहीं लगता। शीला पति का कुछ समाधान करती कि इसी बीच कौंडिन्य ने उसके धागे को तोड़कर सम्मुख जलती हुई आग में डाल दिया। शीला विह्वल होकर दौड़ पड़ी और आग में जलते हुए उस धागे पर उसने दूध की शीतल धारा छोड़ दी। इस अविवेक पूर्ण कर्म के फल-स्वरूप कौंडिन्य का सम्पूर्ण ऐश्वर्य शीघ्र ही जाने कहाँ विलुप्त हो गया। उसने अपने हृदय में विचारा कि कदाचित उसी कृत्य से यह दशा हुई है। अतः उसने अनंत भगवान् को ढूँढ़कर प्रसन्न करने के लिए वन का मार्ग पकड़ा।

मार्ग में एक आम का विशाल वृक्ष दिखाई पड़ा, जिसमें फल तो बहुत लगे थे, किंतु सब फलों में कीड़े पड़ गए थे। पक्षी भी उन्हें नहीं खाते थे। कौंडिन्य ने इस वृक्ष से अनंत भगवान् का पता पूछा, किंतु वृक्ष उसे कुछ न बता सका। वह आगे बढ़ा तो उसने एक सवत्सा गौ देखी, जो हरित घासों से भरे हुए मैदान में दौड़ लगा रही थी, किंतु घास नहीं खा

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

रही थी। थोड़ी दूर आगे बढ़ने पर उसने एक बैल देखा जो बड़े मन से घास चर रहा था। कौंडिन्य ने उनसे भी अनंत भगवान् का पता पूछा किंतु वहाँ भी उसे 'नहीं' मे ही उत्तर मिला। आगे बढ़ने पर कौंडिन्य ने दो विशाल जलाशय देखे, जिनका जल एक दूसरे में आ जा रहा था। कुछ दूर आगे बढ़ने पर उसने एक गदहे तथा हाथी को भी देखा, जो इधर-उधर टहल रहे थे। उन सबसे अनत भगवान् का पता पूछा, किंतु कोई भी उसे नहीं बता सका। कौंडिन्य उदास हो गया और थककर एक निर्जन स्थान पर बैठ गया। थोड़ी देर बाद वहीं पर एक वृद्ध ब्राह्मण का वेश धारण कर भगवान् स्वयं आ गए और कौंडिन्य को एक गिरि-गुफा में लिवा ले गए। उस गुफा में जाने पर कौंडिन्य ने भगवान् विष्णु का प्रत्यक्ष दर्शन किया। कौंडिन्य ने बड़ी भक्ति व आतुरता से भगवान् की प्रार्थना की और अपने अपराध की क्षमा माँगी। भगवान् ने प्रसन्न होकर कौंडिन्य को पुनः चौदह वर्षों तक अनंत-व्रत का विधिवत् पालन करके पूर्ववत् सुख-शांति सम्पन्न होने का वरदान दिया।

कौंडिन्य ने भगवान् से मार्ग में मिले हुये चर-अचर, जीवों के वर्तमान अवस्था के सम्बन्ध में पूछा? तब भगवान् ने उन्हें बताया कि उक्त वृक्ष पूर्व जन्म में एक विद्वान् ब्राह्मण था, किंतु किसी को उसने अपनी विद्या का दान नहीं दिया। वह गाय पहले भूमि थी, किंतु बंजर थी, जो बीज डाला जाता उसे जमने नहीं देती। बैल धर्म-अधर्म की व्यवस्था करने वाला विद्वान् था, किंतु स्वयं किसी वस्तु का विचार नहीं करता था। वे दोनों जलाशय दो सगी बहनें थीं जो एक दूसरे को दान-पुण्य किया करती थीं, किसी दूसरे को नहीं देती थीं। वह गधा क्रोधी तथा हाथी अभिमानी था। और वह वृद्ध ब्राह्मण स्वयं मैं था। यह विवरण बताकर गिरि-गुफा से

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

भगवान् अंतर्धान हो गए। कौंडिन्य अत्यंत प्रसन्नता के साथ अपने घर वापस आ गया और सपत्नीक जीवन पर्यन्त इस व्रत का पालन करता हुआ सांसारिक सुखों का अनुभव कर अंत में श्री अनंत भगवान् में लीन हो गया।'

भगवान् श्रीकृष्ण के यह कथा सुनाने पर पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर ने भी अपने भाइयों तथा द्रौपदी के साथ चौदह वर्षों तक अनंत का व्रत रक्खा और इसके पुण्य-प्रभाव से अपने समस्त कष्टों से छुटकारा प्राप्त किया।

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

१३. पितृपक्ष

आश्विन मास के कृष्णपक्ष के पन्द्रह दिन 'पितृपक्ष' के नाम से विख्यात हैं। इन पन्द्रह दिनों में लोग अपने पितरों को जल देते हैं तथा उनकी मृत्यु-तिथि पर पार्वण श्राद्ध करते हैं।

विधि तथा माहात्म्य—हिंदू धर्म शास्त्रों में मनुष्य के लिए तीन ऋण बताए गए हैं जिनका मोचन करना परम आवश्यक है। देवऋण, ऋषिऋण और पितृऋण। इन तीनों में पिता का ऋण सबसे बड़ा, इसलिए माना गया है कि वह प्रत्यक्ष देवता है। जिन माता-पिता ने हमारे कल्याण के लिए अनंत उपाय किए, कठोर कष्ट सहन किए, उनके ऋण को न चुकाना परम कृतघ्नता है। मनुष्य का जन्म ही निरर्थक है, यदि पितरों का ऋण श्राद्धों के द्वारा नहीं चुकाया जाता है। यद्यपि मृत्यु के अनन्तर और्ध्वदेहिक क्रिया के साथ पिण्ड दानादि की भी श्राद्ध संज्ञा है तथापि पितृपक्ष श्राद्धों के लिए निश्चित पन्द्रह तिथियों का एक समूह है। किसी भी मास तथा तिथि में मरे हुए अपने पितरों के लिए पितृपक्ष की उसी तिथि को श्राद्ध किया जाता है।

श्राद्ध का अर्थ है—श्रद्धा से जो कुछ दिया जाय। किन्तु आज श्राद्ध का अर्थ है पितरों के उद्देश्य से पिण्ड दानादि की क्रिया। पितृपक्ष में पिता की मृत्युतिथि के दिन सर्वसुलभ जल, तिल, यव, कुश अक्षत, दूध, पुष्प आदि से उनका श्राद्ध किया जाता है, इसके लिए कर्मकांड के कुछ विधान निश्चित हैं। उसी विधान के साथ पिंडदान करने के अनन्तर श्राद्धकर्त्ता गौ, कुत्ते तथा कौए को भोजन का कुछ अंश देकर विद्वान् ब्राह्मण, पुरोहित तथा अपनी शक्ति के अनुसार कुलीन, सदाचारी तथा निर्धन ब्राह्मणों को भोजना कराता है। पिंडदान की क्रिया

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

मध्याह्न में अधिक फलदायिनी कही गई है। इससे पितरगण वर्ष भर तक प्रसन्न रहते हैं और उनकी प्रसन्नता के फलस्वरूप श्राद्धकर्त्ता को धन-धान्य, सुख-सम्पत्ति एवं पुत्र-पौत्रादि की प्राप्ति होती है।

श्राद्ध के शास्त्रीय अधिकारी--श्राद्ध का अधिकार केवल पुत्र को है। यदि पुत्र न हो, तो पुत्री का पुत्र अर्थात् नाती श्राद्ध का अधिकारी होता है। किन्तु नाती भी न हो, तो परिवार का कोई भी उत्तराधिकारी श्राद्ध कर सकता है। जिस पिता के अनेक पुत्र हों, उनमें से केवल ज्येष्ठ पुत्र को श्राद्ध करना चाहिए। अगर पुत्र अलग-अलग हो गए हों, तो उन्हें संयुक्त रूप में एक ही श्राद्ध करना चाहिए, अलग-अलग नहीं करना चाहिए। धर्म-शास्त्रों का कथन है कि इसी श्राद्ध आदि के लिए ही मनुष्य को पुत्र उत्पन्न करना चाहिए, क्योंकि पुत्र के न रहने से श्राद्धादि क्रिया तो समाप्त होती ही है, अपना नाम भी नष्ट हो जाता है।

पुत्र के अभाव में पौत्र तथा पौत्र के अभाव से प्रपौत्र अथवा किसी के भी न रहने पर भाई की सन्तान भी श्राद्ध के अधिकारी होते है। किन्तु पुत्र के अभाव में विधवा पत्नी भी श्राद्ध कर सकती है। इसी प्रकार पत्नी का श्राद्ध पति तभी कर सकता है जब उसे कोई पुत्र न हो। पुत्र की उपस्थिति में पति को पत्नी की श्राद्ध नहीं करना चाहिए। श्राद्ध के प्रसंगों में अधिकारी और अनधिकारी का निर्णय धर्मशास्त्रों में बड़ी छान-बीन के साथ किया गया है। किन्तु उनका संक्षेप यही है कि हिन्दू परिवार में कोई भी प्राणी ऐसा नहीं होना चाहिए जिसे मरणोपरान्त पिण्ड एवं जल मिलने की आशा न हो। प्रत्येक पुरुष अथवा स्त्री को अपनी मृत्यु से पूर्व अपने परलोक को बनाने की चिन्ता अवश्य करनी चाहिए। यदि उसे कोई पुत्र

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

नहीं है तो किसी सगोत्र का पुत्र गोद ले लेना चाहिए। मानव जीवन में पारलौकिक दृष्टि से इस प्रकार का सूक्ष्म विवेचन हिन्दुओं के सामाजिक जीवन की अपनी विशेषता है। श्राद्धों का इसमें अद्भुत महत्त्व है। पुराणों की अनेक रोमांचकारी कथाओं में इसका विपुल वर्णन किया गया है। धर्मशास्त्रों में इनकी विशेष महिमा गाई गई है। इन सब का परिणाम यह है कि हिन्दू परिवारों में आज के इस वैज्ञानिक युग में भी अपने पितरों अथवा पूर्वजों के प्रति अटूट श्रद्धा है और संभवतः ऐसे बहुत कम घर होते हैं जिनमें पितृपक्ष में पितरों का श्राद्ध आदि न किया जाता हो।

पितृपक्ष में, जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, श्राद्ध तो मुख्य तिथियों को ही होते हैं, किन्तु तर्पण प्रतिदिन किया जाता है। देवताओं तथा ऋषियों को जल देने के अनंतर पितरों को जल देकर तृप्त किया जाता है। पितरों में पिता, पितामह (पिता के पिता), प्रपितामह, (पितामह के पिता) माता, पितामही तथा प्रपितामही और मातामह, (नाना) प्रमातामह (प्रनाना) तथा वृद्ध प्रमातामह (प्रनाना के पिता) एवं मातामही, प्रमातामही तथा वृद्ध प्रमातामही का नाम एवं गोत्र का उच्चारण करते हुए अपने मन में उनके स्वरूप का अनुध्यान करना चाहिए। इनके अतिरिक्त पितृव्य (चाचा) मातुल, श्वसुर आदि अन्यान्य सम्बन्धियों को भी जल देना चाहिए। इनके अतिरिक्त भी अपने कुल, परिवार तथा सम्बन्ध में ऐसे लोगों को भी जल देना चाहिये, जिन्हें जल देनेवाले न हों। जल देते समय स्नानादि से निवृत्त होकर यज्ञोपवीत को दाहिने कन्धे पर रखकर अंजलि में तिल पुष्प के साथ संकल्प पूर्वक पितरों का नाम गोत्र एवं स्वरूप का स्मरण करना चाहिए। इसकी विधि पुरोहितादि से समझ लेनी चाहिए।

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

१४. विजय दशमी

आश्विन शुक्ल पक्ष की दशमी को आने वाला विजय-दशमी अथवा दशहरा त्योहार हिन्दुओं का प्रमुख त्योहार है। यह हर्ष और उल्लास का उत्सव है, जो आश्विन शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से प्रारंभ होकर दशमी को रावण जल जाने पर समाप्त होता है। इस उत्सव में मर्यादा पुरुषोत्तम राम की झाँकियाँ प्रदर्शित की जाती हैं। यह एक स्मारक है, जो रावण पर राम-विजय की याद दिलाता है। यानी अच्छे की विजय और बुरे की हार का प्रतीक कहा जाता है। विजय दशमी के दिन मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्रीरामचन्द्रजी ने रावण पर विजय पाने के लिये यात्रा की थी। तभी से यह पवित्र तिथि विजय के नाम से विख्यात हुई और इस दिन को विजय यात्रा के पर्व के रूप में मनाया जाने लगा। प्राचीन काल में राजा लोग इसी दिन शत्रु-विजय करने का अभियान करते थे। वर्षा के चार महीनों के आवास का परित्याग इसी पुण्य तिथि को किया जाता था। कथन है कि विजया दशमी को आरंभ हुआ कार्य असफल नहीं होता।

कहीं-कहीं इस तिथि को परिवारवालों तथा सेवकों को नूतन बस्त्र प्रदान किए जाते हैं., और बहिनें अपने भाई को टीका काढ़ती हैं। शास्त्रीय विधि के अनुसार आज के दिन शमी-वृक्ष के पूजन का विशेष महत्त्व है। इसका कारण यह है कि धनुर्धर अर्जुन के साथ अज्ञात वास के कठिन दिनों में एक शमी के वृक्ष ने ही पांडवों की मर्यादा-रक्षा की थी। पुराणों की एक कथा के अनुसार भगवान् रामचन्द्रजी ने भी अपनी विजय-यात्रा में शमी का पूजन किया था। विशेषतया यह त्योहार राजघराने का है। पर चूँकि आज कल राजतंत्र का चलन

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

समाप्त हो चुका है, इसलिये इसके सार्वजनिक समारोह का महत्त्व ही अधिक है। वैसे क्षत्री तथा कुछ अन्य वर्ग अब भी अपने शस्त्रास्त्रों, तलवार, बंदूक आदि की पूजा करते हैं। वैश्य अपने हिसाब किताब के नये कागज़ इसी दिन बदलते तथा उनका पूजन करते हैं। अन्नादि वस्तुओं के बाज़ार-भाव भी इसी दिन लिखे जाते हैं।

बड़े २ नगरों में अखाड़ों के जलूस, राम-विवाह की बारात बड़े सजधज के साथ निकाले जाते हैं। राम-रावण युद्ध व उनकी कृत्रिम सेना युद्ध का स्वाँग भी रचा जाता है जिसे हम रामलीला के नाम से अपनी २ सामर्थ्यानुसार सम्पन्न करते हैं।

---

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

१५. शरत् पूर्णिमा

कृषि-प्रधान देश होने के नाते भारत की संस्कृति, आचार-विचार, व्रत, पर्व और त्योहार सभी कृषि की पृष्ठ भूमि पर बने हैं। कृषि का जलवायु से अटूट सम्बन्ध है। विशेष भौगोलिक परिस्थिति होने के कारण भारत में संसार भर से अधिक ऋतुएँ (छः) होती है। बसंत और शरत् जिसमें सबसे मनोरम हैं। प्रायः प्रत्येक ऋतु-परिवर्तन पर किसी व्रत, पर्व अथवा त्योहार का व्यवधान इस देश में है। इस ऋतु में निर्मल-स्वच्छ आकाश में हरे वस्त्रों से पूर्णतः ढकी धरती बहुत ही सुहावनी लगती है। न अधिक गर्मी और न अधिक सर्दी, शरीर को स्वास्थ्य प्रदान करती है। मन्द, स्वच्छ समीर मन को अनुपम शीतलता प्रदान करता है। इसी मन-मोहक ऋतु के आगमन पर शरत् पूर्णिमा का त्योहार आता है। पुराणों के अनुसार चन्द्रमा में अमृत बहकर आ जाता है। अतएव जो मनुष्य शरत्पूर्णिमा को चन्द्रमा के दर्शन करता है, उससे जीवनी-शक्ति प्राप्त होती है।

आश्विन की पूर्णिमा ही शरत्पूर्णिमा है। वैसे कुछ लोग कार्तिक की पूर्णिमा को शरत्पूर्णिमा मानते हैं, पर यह मिथ्या है। शरत्पूर्णिमा की रात्रि में मखाने अथवा किसी और की बनी खीर को खुली चाँदनी में रखकर चन्द्र देवता का भोग लगाते हैं। घर के ठाकुरजी को भी खुली चाँदनी में विराजमान करते हैं। कोई कोई नेत्रों की ज्योति बढ़ाने के लिये सुई में धागा पोने की कोशिश करते हैं। प्रातः खुली चाँदनी में रखी खीर का ही प्रसाद सबको दिया जाता है, जो रोगों और व्याधियों को दूर करता है।

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

१६. करवा चौथ

करवा चौथ का व्रत कार्तिक कृष्ण चतुर्थी को तब किया जाता है, जब चन्द्रोदय के समय चतुर्थी हो। इस व्रत का अनुष्ठान केवल स्त्रियाँ ही करती हैं। इसमें शिव, पार्वती, स्वामि कार्त्तिकेय, गणेश जी और चन्द्रमा का पूजन किया जाता है। नैवेद्य के रूप में मिट्टी के कच्चे करवे में लड्डू, पूआ या पपड़ी रक्खी जाती है, इसी करवे के प्रयोग के कारण इसका नाम करवा चौथ पड़ा।

विधि

इस दिन नित्य-कर्म (शौच व स्नानादि) से निवृत्त होकर व्रत का संकल्प करना चाहिए। दिन भर उपवास करके संध्या के समय बालू या सफेद मिट्टी की वेदी बनाकर उस पर चंद्रमा की मूर्ति तथा उसके नीचे शिव-पार्वती, गणेश स्वामि कार्त्तिकेय की मूर्तियाँ बनाई जायँ और उन सबका विधिवत् पूजना और प्रार्थना की जाय, फिर करवा में लड्डू या पुआ भरकर साथ में मिष्ठान तथा दक्षिणा रखकर ब्राह्मण को दान देना चाहिए। रात्रि में चंद्रमा उदय होने पर अर्घ्यदान और इसकी कथा सुनकर भोजन करना चाहिए। कथा इस प्रकार है:—

कथा

एक समय जब अर्जुन कीलगिरि पर चले गए तो द्रौपदी बड़ी चिन्तित हुईं कि यहाँ नित्य अनेक प्रकार के विघ्न उपस्थित होते हैं, और अर्जुन हैं नहीं। उपाय क्या किया जाय। उन्होंने श्री कृष्णचंद्र का ध्यान किया, जब वह आये, तो द्रौपदी ने उनसे इस प्रकार के विघ्नों की शान्ति का कोई सहल उपाय

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

जानने की प्रार्थना की। श्री कृष्णजी ने उन्हें सर्व-विघ्न-विनाशक करवा-चतुर्थी का व्रत करने की सलाह दी। कहते हैं, एक बार पार्वती जी ने भी शिव जी से ऐसा ही प्रश्न किया था जिसके उत्तर में शिवजी ने भी सर्व विघ्न-विनाशक करवा-चौथ-व्रत का अनुष्ठान बताया था। अतः जब द्रौपदी ने इस व्रत को विधि-पूर्वक किया, तभी कौरवों का पराजय होकर पाण्डवों की विजय हुई। इस कारण पुत्र सौभाग्य और धन-धान्य की वृद्धि चाहनेवाली स्त्रियों को इस व्रत को अवश्य करना चाहिए।

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

१७. अहोई अष्टमी

कार्त्तिक कृष्ण अष्टमी को अहोई अष्टमी मनाई जाती है। इसका व्रत पुत्रवती स्त्रियाँ ही रखती हैं, क्योंकि संतान की मंगल-कामना ही इस अष्टमी का ध्येय है। इस दिन स्त्रियाँ सारे दिन व्रत रखती हैं। संध्या को दीवार में आठ कोष्ठक की एक पुतली बनाई जाती है। उसी के समीप सेही (साही) के बच्चों की और सेई की आकृति बनाई जाती है। जमीन में चौक पूर कर कलश की स्थापना की जाती है। विधिवत् कलश पूजन के बाद अष्टमी का पूजन होता है और रसोई में तैयार किए भोजन को थाल में सजाकर भोग लगाया जाता है। उसके बाद यह कथा कही जाती है :—

कथा

किसी स्त्री के सात पुत्र थे। कार्तिक के दिनों में दीवाली के पूर्व मकान की लिपाई-पुताई करने के लिये मिट्टी लाने वह स्त्री बाहर गई। जहाँ वह मिट्टी खोद रही थीं, उसी के नीचे सेई की माँद थी। दैवयोग से उस स्त्री की कुदाली सेई के बच्चे को लग गई, जिससे वह तुरन्त ही मर गया। यह देखकर उस स्त्री को बड़ा दुःख हुआ, उसने हर प्रकार के यत्न किये पर वह बच्चा तो मर चुका था, अब क्या हो सकता था ? वह स्त्री मिट्टी लेकर चली आई।

कुछ दिनों के बाद उसका बड़ा लड़का मर गया, उसके बाद दूसरा और फिर तीसरा। यों साल-भर के अन्दर उसके सातों लड़के मर गए। इस दुःख में वह अत्यन्त दुःखी रहने लगी। अपने विलाप में उसने वयोवृद्ध स्त्रियों से यह भी बताया कि मैंने जानकर तो कोई पाप किया नहीं, जिसका मुझे

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

यह दंड मिला। हाँ, धोखे से मिट्टी खोदने में एक सेई के बच्चे को कुदाली लग गई थी। उसी दिन से साल-भर के अन्दर मेरे सातों पुत्र मर गए।

वे स्त्रियाँ बोलीं कि आधा पाप तो तुम्हारा अभी खत्म हो गया, जो तुमने चार के कान में बात डाल कर पश्चात्ताप किया, अब जो शेष रहा, उसका प्रायश्चित यही है कि तुम उसी अष्टमी के दिन अष्टमी भगवती के समीप सेई और सेई के बच्चों के चित्र बनाकर उनकी पूजा किया करो। ईश्वर ने चाहा तो तुम्हारा हिंसा पाप दूर होकर तुम्हें पुनः संतान की प्राप्ति होगी। तब से उस स्त्री ने कार्तिक कृष्ण अष्टमी को व्रत रखना आरंभ कर दिया और आगे भी व्रत और पूजन करती रही। ईश्वर की कृपा से उसको पुनः सात पुत्र प्राप्त हुए।

तभी से इस व्रत और पूजन की परिपाटी चली आ रही है। स्त्रियाँ बड़ी भावुक होती हैं। उन्हें यह मालूम हो जाय कि अमुक वस्तु अथवा क्रिया संतान के लिये लाभप्रद है फिर वे विना कहे सुने उसे अवश्य करेंगी। उनका दृढ़ विश्वास है कि यह व्रत संतान पर आने वाले कष्टों से रक्षा करता है।

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

१८. धन-तेरस

कार्त्तिक कृष्ण त्रयोदशी को धन-तेरस कहते हैं। इसका नामकरण आयुर्वेद के प्रवर्तक अधिदेवता भगवान् धन्वन्तरि की जयन्ती के उपलक्ष में हुआ है। वास्तव में यह दिन यमराज-पूजन का है। विधि-विधान से पूजनोपरान्त यमराज को प्रसन्न करने के निमित्त एक दीपक मुख-द्वार पर जला कर रक्खा जाता है। इसी दिन नए बरतनों की ख़रीद-फरोख़्त विशेष रूप से होती है। इसे बरतन खरीदने का त्योहार कहा जाय, तो अधिक उपयुक्त होगा। यह दीवाली से दो दिन पूर्व मनाया जाता है। इसका विधान इस प्रकार है:—

विधि

हल जुती हुई मिट्टी को दूध में भिगोकर सेमर के वृक्ष की डाल में लगाए और उसको तीन बार अपने शरीर पर फेर कुंकुम का टीका लगाए। पुनः कार्तिक स्नान करे। प्रदोष के समय मठ, मन्दिर, कुआँ, बावली, घाट, कोट बाग, मार्ग, गोशाला, अश्वशाला और गजशाला आदि स्थानों में तीन दिन तक बराबर दीपक रखना चाहिए। यदि तुला राशि का सूर्य हो, तो चतुर्दशी और अमावस्या की शाम को एक जली लकड़ी लेकर उसको घुमाकर पितरों को भी मार्ग दिखाने का विधान है। धन-तेरस के सम्बन्ध में यह किंवदन्ती जनता में प्रचलित है:—

कथा

एक दिन यमराज ने अपने दूतों से पूछा—"मेरी आज्ञानुसार जब तुम प्राणियों के प्राण-हरण करते हो, तब तुमको

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

किसी समय किसी के प्राण-हरण करने में दया भी आती है या नहीं ? यदि कभी तुमको दया आई है, तो कब और कहाँ ? यमराज के दूत बोले--"हंस नाम का एक बड़ा शक्तिशाली राजा था। वह किसी समय शिकार के लिये वन में गया हुआ था। दैवात् राजा अपने साथियों से बिछुड़कर और मार्ग भूलकर हेम राजा के राज में चला गया। हेम राजा ने महाराजा हंस का उचित स्वागत-सत्कार किया। उसी समय हेम राजा के यहाँ पुत्र उत्पन्न हुआ। परन्तु छठी के पूजन में देवी ने प्रकट होकर कहा –"राजन्, तुम्हारा यह लड़का किसी भी मांगलिक कार्य के चौथे दिन मर जायगा।" राजा हंस को जब यह ज्ञात हुआ, तो उसने हेम-राजा के पुत्र को मृत्यु से बचाने के लिये उसे यमुनाजी की एक खोह में छिपाकर रक्खा। परन्तु युवा होने पर जब उसका विवाह हुआ, तो विवाह के ठीक चौथे दिन हम लोगों ने उसके प्राण का हरण किया। हे नाथ ! मांगलिक समारोह में शोक-जनक घटना का होना वास्तव में अत्यन्त घृणित कार्य था। परन्तु क्या करें, हम लोग परतन्त्र थे। वही एक समय था, जब हम लोगों को उस बालक के शक्तिशाली महाराज की उपस्थिति में प्राण हरण करते समय अत्यन्त दया आई। अतः हे प्रभु ! कृपा करके ऐसी युक्ति बताइये, जिससे प्राणी इस प्रकार अनायास आपत्ति से उद्धार पा सके।" यह बचन सुनकर यमराज ने उपर्युक्त विधि-पूर्वक धन-तेरस के पूजन और दीप-दान का विधान बतलाकर कहा--"जो लोग धन-तेरस के दिन मेरे निमित्त दीपदान और व्रत करेंगे, उनकी असामयिक मृत्यु कदापि न होगी।

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

१९. दीपावली

दीपावली हमारे देश का प्रमुख त्यौहार है। इसका सामाजिक एवं धार्मिक दोनो दृष्टियों से विशेष महत्त्व है। करोड़पति और मजदूर दोनो ही दीपावली के अवसर पर भगवती लक्ष्मी की आराधना कर उनकी प्रसन्नता की एक समान आशा करते हैं। कार्त्तिक की अमावस्या को यह त्यौहार मनाया जाता है। १५-२० दिन पूर्व से ही लोग अपने घरों की पुताई-रँगाई आदि में लग जाते हैं और ठीक दीपावली के दिन दिया-बत्ती से घर को आलोकित करते हैं। किंवदन्ती है कि लक्ष्मी गन्दे स्थानों को पसंद नहीं करतीं और जहाँ अधिक रोशनी और जगमगाहट देखी, वहीं रम गईं। इसलिये इस अवसर पर घरों व दूकानों को अधिक आलोकमय बनाने की चेष्टा की जाती है। इस दिन व्यापारी वर्ग अपना देना-पावना वसूल करने में अधिक दृढ़ दिखाई पड़ते हैं। पुराने खाते बंद और नए चालू करते हैं। इस दिन लक्ष्मी-पूजन का विधान इस प्रकार है:—

विधि

दीपावली के दिन पवित्र मन-विचार एवं उल्लास और उत्साह की आवश्यकता अनिवार्य है। उस दिन प्रातःकाल नित्य-कर्मों से निवृत्त होकर पितृगण और देवताओं का पूजन करके दूध, दही, घृत आदि से पितरों की पार्वण श्राद्ध करे। यदि संभव हो सके, तो दिन-भर व्रत रखकर संध्या-समय लक्ष्मी-पूजन के बाद फलाहार करे। सन्ध्या के समय घर-द्वार, बाग-बगीचे, मन्दिर-चौराहा यहाँ तक की घूरे और नावदान पर भी तेल का दीपक जलाना चाहिए। पूज्य स्थानों पर घृत

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

का दीपक जलाने का विधान है। दीपावली सजाने के बाद लक्ष्मी-पूजन की तैयारी करनी चाहिए।

जिनके घरों में देव-पूजा के लिये अलग कमरे की व्यवस्था हो तो वहाँ अन्यथा अलग स्वच्छ घर में पूजा की व्यवस्था की जानी चाहिये। अपनी सामर्थ्य के अनुसार घर को साफ़ कर पुष्प-पल्लवों से सुसज्जित कर लेना चाहिए। तदनन्तर पवित्र वेदी बनाकर अक्षत एवं कुंकुम आदि से अष्ट-दल कमल बनाये और उस पर लक्ष्मी की मूर्ति स्थापित करे। लक्ष्मीजी के साथ गणेशादि देवताओं की षोडशोपचारों से पूजा करे, तथा विविध प्रकार के मिष्ठान्नों तथा फलों का भोग लगाये एवं रूपये-पैसे रखने के स्थान अथवा दूकान पर घृत का दीपक जलाये। पूजन के अनन्तर परिक्रमा करनी चाहिये और लक्ष्मी के शयन का प्रबन्ध करना चाहिए। कहीं-कहीं परम्परा-गत रूढ़ि के अनुसार द्यूतक्रीड़ा भी की जाती है। जिसके लिये कौड़ी भी रक्खी जाती है। इस दिन की जूए की हार-जीत के परिणाम को लोग अगले साल के लाभ-हानि की सूचना समझते हैं।

लक्ष्मी-पूजन का महत्त्व

ब्रह्मा, विष्णु और महेश इन त्रिदेवों के समान ही सरस्वती, लक्ष्मी और पार्वती इन तीनों देवियों की भी हिन्दू जाति में सनातन से परम प्रतिष्ठा है। दीपावली भगवती लक्ष्मी की अर्चना का पवित्र पर्व है। श्रीलक्ष्मी को ही तो हम शोभा, समृद्धि, सुरुचि एवं सम्पन्नता का भंडार मानते हैं। धन-सम्पत्ति की अधिष्ठात्री लक्ष्मी के रूप में हम सदा से इसी की कामना करते आये हैं। भगवती लक्ष्मी की पूजा का यह पावन पर्व हमारे देश में शताब्दियों से चेतना एवं जागृति का एक द्योतक

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

बना हुआ है। पुराणों की मान्यता है कि कार्त्तिक की इस अमावस्या में विष्णु-प्रिया लक्ष्मी सद्गृहस्थों के घरों में घूमकर देखती हैं कि निवास करने योग्य कौन-सा घर है। जिस घर को निवास के अनुकूल पाती हैं, वहीं शयन करती हैं और उस घर को धन-धान्य से भर देती हैं। इसी कारण आज के दिन लोग घरों को ख़ब साफ़ और आलोकित रखते हैं।

कथा

एक बार दैत्यराज बलि ने अपने प्रताप से तीनों लोकों को जीत लिया। अपने प्रतिद्वन्द्वी सारे देवताओं को लक्ष्मी सहित बन्दी बना लिया था। चारों ओर असुर राज्य छा गया था। सारे ब्रह्मांड में हाहाकार मच गया था। देवताओं को छुड़ाने का और कोई उपाय न देख भगवान् विष्णु ने वामन अवतार धारण किया। वामन भगवान् ने दैत्यराज बलि के पास भिक्षा माँगी। असुर होते हुए भी बलि महान् दानी था। उसने वामन भगवान् से कहा – "बोलो, क्या माँगते हो ?"

"मुझे केवल तीन पग भूमि चाहिये।" वामन भगवान् ने याचना की।

दैत्यराज बलि ने सोचा, यह भिक्षा तो कुछ भी नहीं है। उसने कहा—"जहाँ भी इच्छा हो, भूमि ले लो।"

वामन भगवान् ने अब अपने शरीर को बढ़ाना शुरू किया। उन्होंने अपने शरीर को इतना बढ़ाया कि दो पग में तीनों लोक नाप लिए, बचा एक पग। कोई और उपाय न देख बलि ने उस पग में अपने शरीर को नपवा दिया। इस प्रकार बलि का राज्य और उसका प्रताप नष्ट हुआ। लेकिन बलि की दान-शीलता ने उसे मोक्ष पद दिलाया। उसकी दान-शीलता के कारण ही दीपावली के दिन कहीं-कहीं बलि की भी पूजा होती है।

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

बलि को जीतकर भगवान् विष्णु ने देवताओं को क़ैद से छुड़ाया। चारों ओर असुर-राज होने से कहीं स्वच्छ शयन-कक्ष न था। अतएव सब देवतागण लक्ष्मीजी-सहित क्षीर सागर में शयन करने गए। यह कार्त्तिक अमावस्या की रात्रि थी। यह कथा बताकर सनत्कुमारजी ने कहा, इसलिये दीपावली के दिन घर को साफ कर स्वच्छ सुगंधित कमल-पुष्पों से सुसज्जित शयन-कक्ष का प्रबन्ध करना चाहिये, ताकि लक्ष्मीजी क्षीर सागर के बजाय घरों में शयन करें।

जुआ खेलने की कथा

धन-तेरस से लेकर दीवाली तक असुर-राज बलि का राज्य-दिवस माना जाता है। अतः लोग आसुरी प्रावृत्तियों का होना अनैतिक नहीं मानते। आसुरी प्रवृत्तियों में जुआ खेलना भी एक है। खेलने के विधान की प्रामाणिकता एक पौराणिक कथा पर आधारित है। एक बार शंकर-पार्वती में द्यूत-क्रीड़ा हुई। संयोगवंश शंकर अपना सब कुछ हार गये। यहाँ तक कि पार्वती ने उनका व्याघ्र-चर्म तथा सर्पादि तक ले लिया। शंकर को ग्लानि हुई। वल्कल वस्त्र धारण किए उदास मन गंगा-तट पर चले गए। स्वामिकार्त्तिकेय को जब पिता की चिन्ता का पता चला, तब वह माता के पास सब वस्तुएँ वापस लेने पहुँचे। पार्वती ने जुए में जीती वस्तुएँ विना जुए में हारे, देने से इनकार कर दिया। स्वामिकार्त्तिकेय खेलने को राज़ी हो गये। संयोग से अब की बार पार्वतीजी हार गईं। स्वामिकार्त्तिकेय सब सामान वापस लेकर शंकर के पास गये। पार्वती को अब बहुत दुःख हुआ। सब चीजें भी चली गईं और शंकर भी चले गए। पार्वती ने अपने मन की व्यथा प्रिय पुत्र गणेश से कही। गणेशजी ने पार्वती से द्यूत विद्या सीखकर स्वामिकार्त्तिकेय

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

को जुए में हरा दिया। सारा सामान वापस लेकर वह पावतीजी के पास आये। पार्वतीजी खुश हुईं, पर शंकरजी को न देख उन्हें भी ले आने को कहा! गणेशजी लौट पड़े। शंकरजी हरिद्वार पहुँच गए थे। वहीं नारद और विष्णु भी थे! शंकर पार्वती को हराने की योजना बना रहे थे। विष्णु को उन्होंने पासा बनने को कहा। गणेश ने शंकर से माता का संदेश कहा। शंकर पार्वती से रुष्ट थे। वह उनके पास जाना नहीं चाहते थे। किन्तु गणेशजी के बहुत आग्रह करने पर वह चलने को राज़ी हो गये। शंकर के भक्त रावण ने बिल्ली बन कर गणेश के वाहन मूषकराज को डरा दिया। मूषकराज ने गणेश को गिरा दिया और भाग गया। गणेश अपना भारी भरकम शरीर लेकर धीरे-धीरे चलने लगे। इधर पार्वती के पास पहुँचकर शंकर ने पार्वती से कहा, मैंने एक नया पासा बनवाया है। क्या तुम उससे खेलने के लिये राज़ी हो?" पार्वती ने शंकर से प्रश्न किया, "जब तुम्हारे पास कोई चीज़ है नहीं तब जुआ किससे खेलोगे?"

नारद ने तब वीणा आदि अपनी चीज़ें शंकर को दे दीं। पार्वती सब कुछ हार गईं। इतने में गणेश भी आ पहुँचे। वे तो दूरदर्शी थे। उन्होंने विष्णु के पासा बनने की बात पार्वती-से कही। पार्वतीजी क्रुद्ध हो उठीं। रावण ने बहुत समझाया, पर इनका क्रोध शांत न हुआ। उन्होंने शंकर को शाप दिया "तुम सदा गंगा की धारा का बोझ ढोते रहोगे।" नारद को शाप दिया--"तुम धूर्तता करते हो इसलिये किसी भी स्थान पर एक घड़ी जमकर न बैठ सकोगे।" विष्णु को शाप दिया--"यही रावण तुम्हारा परम शत्रु होगा।" रावण को शाप दिया--"तुम्हारा विनाश यही विष्णु करेगा।" स्वामिकार्त्तिकेय को शाप दिया--"तुम कभी भी जवान न होगे।"

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

पार्वती का शाप सुनकर सब बड़े चिंतित और उदास हुए। तब नारद ने अपनी सरल और हँसानेवाली प्रकृति से सबका मनोरंजन किया। वह नाचने-कूदने, गाने-बजाने लगे। नारद का खेल देख पार्वती खुश हुईं। उन्होंने नारद से वरदान माँगने को कहा। नारद ने कहा, जब सबको वरदान मिलेगा, तभी मैं वरदान लूँगा। पार्वतीजी राज़ी हो गईं। शिव ने वरदान माँगा– 'आज ही के दिन कार्त्तिक मास की शुक्ल प्रतिपदा को जुए में जीतनेवाला वर्ष-भर विजयी हो।" विष्णु ने माँगा "चाहे छोटा काम करूँ या बड़ा सब पूरे हों।" स्वामिकार्त्तिकेय ने कहा "जब मैं बालक ही बना रहूँगा तब मेरा साथ विषय वासना से न हो और मैं सदा ही ध्यान तपस्या में लगा रहूँ।" रावण ने इच्छा की "वेदों की सुविस्तृत व्याख्या कर सकूँ और शिव में मेरी भक्ति अटूट हो।" जब सब देवगण वर माँग चुके; तब पार्वती ने गणेश से भी कुछ माँगने को कहा, गणेश ने कामना की "सारे अनुष्ठानों में मेरी पूजा सर्वप्रथम हो।" नारद की अभिलाषा थी कि वे देवर्षि हों और सारे देवगण इनकी आज्ञा में अनुरक्त रहें।

पार्वतीजी ने सबकी मनोकामना पूरी की।

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

२०. अन्नकूट

दीपावली के दूसरे दिन, कार्त्तिक शुक्ल प्रतिपदा को, अन्नकूट का महोत्सव होता है। यह वैष्णवों का मुख्य पर्व है। यह व्रज में विशेष लोकप्रिय है। इसका सम्बन्ध गोवर्धन-पूजन से है। कदाचित् इस महोत्सव का आरम्भ भगवान् श्रीकृष्ण ने किया था। भगवान् श्रीकृष्ण जिस समय अवतरित हुए थे, उस समय देश की सामाजिक स्थिति अच्छी न थी। यज्ञों के नाम पर पशुओं की हिंसा बड़ी क्रूरता से की जाती थी। अतः उन्होंने यज्ञों में होनेवाला इन्द्र का भाग बन्द करा दिया और गौ-पूजन की परम्परा चलाई, जो विशुद्ध अहिंसात्मक है।

विधि

घर के चौक में गाय के गोबर का गोवर्धन-पर्वत बनाए और उसका पूजन करे। गौओं को भी स्नानादि से सुसज्जित कर पूजन करे। अनेक प्रकार के पकवान, मिठाई आदि का भोग लगाए। सभी नैवेद्यों के बीच भात का पहाड़ बनाये। भोग सामग्री की इतनी विपुलता और विविधता हो, जितनी बनाई जा सके। सभी प्रकार की मिठाइयाँ और पकवान तो होने ही चाहिये और सबकी आकृति पर्वत के शिखर के समान होनी चाहिये। यही अन्नकूट का विधान है, जैसा कि उसके नाम से ही स्पष्ट है।

कथा

भगवान् श्रीकृष्ण जब बड़े हुए और भले-बुरे का भेद समझने लगे, तो उन्हें इंद्र-पूजा में, व्रजवासियों द्वारा क्रिया-कम और पशुबलि देखकर बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने व्रजवासियों

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

से इंद्र-पूजा बंद कर देने को कहा। ब्रजवासियों ने कहा कि इन्द्र ही जल बरसाता है जिससे अन्न उत्पन्न होता तथा पशुओं को चारा मिलता है। इसीलिये सब लोग मिलकर इन्द्र-पूजा बड़ी निष्ठा से करते हैं। कृष्ण ने पूछा कि क्या किसी ने इन्द्र को जल बरसाते देखा है, तो कोई हाँ न कह सका। श्रीकृष्ण ने बताया कि पर्वतराज गोवर्धन के कारण ही यहाँ सुख समृद्धि है। हमको इसी की पूजा करनी चाहिये। इन्द्र पूजा बंद हो गई, ब्रजवासी गिरिराज गोवर्धन की पूजा करने लगे।

देवर्षि नारद ने यह बात जाकर इन्द्र से कह दी। इन्द्र क्रोधित हो उठे। उन्होंने अपने प्रलयकारी मेघों को आदेश दिया कि समस्त ब्रज-भूमि को डुबो दो। संवर्त आदि मेघों ने ब्रज पर घनघोर वर्षा की। सारी खेती नष्ट कर दी। मकान-झोपड़ियाँ सब बह गये। कहीं पैर रखने को जमीन न रह गई। पशु मरने लगे। लोग चिन्तित और दुखी हो उठे। सब श्रीकृष्ण के पास गये। श्रीकृष्ण उन्हें गोवर्धन पर्वत के पास ले गए। पुराणों के अनुसार श्रीकृष्ण ने अपनी एक उँगली पर गोवर्धन पर्वत उठा लिया। सारे ब्रजवासी पर्वत के नीचे रहने लगे। जब इन्द्र का कोई बस न चला, तो उसने हार मान ली। इस प्रकार श्रीकृष्ण ने अपनी माया शक्ति ब्रजवासियों को दिखा दी। तभी से गोवर्धन-पूजा का चलन हो गया है।

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

२१. यमद्वितीया या भैया दूज

अन्नकूट के दूसरे दिन, कार्त्तिक शुक्ल द्वितीया को, यमद्वितीया या भैया दूज कहते हैं। शास्त्रीय मत के अनुसार यमद्वितीया के दिन मृत्यु के देवता यमराज का पूजन किया जाता है। कहीं-कहीं इसी दिन कलम, दावात तथा चित्रगुप्त की भी पूजा की जाती है। प्रतिपदा को लिखने-पढ़ने का सब कार्य बन्द रहता है, द्वितीया के दिन कलम आदि के पूजन के अनन्तर फिर कार्य आरम्भ होता है। इसी दिन बहिन अपने भाई को भोजन कराती और टीका करती हैं। यह त्योहार बहन भाई के स्नेह को अटूट रखने का साक्षी है।

विधि

स्नानादि से निवृत्त होकर मध्याह्न के पहले प्रत्येक स्त्री अपने भाई के दीर्घ-जीवन, कल्याण एवं वृद्धि तथा अपने सौभाग्य के लिए अक्षत एवं कुंकुम आदि से अष्टदल कमल बनाकर इस व्रत का संकल्प ग्रहण करे। फिर मृत्यु के देवता यमराज की विधि-पूर्वक पूजा करे फिर चित्रगुप्त, यमदूतों तथा यम की बहन यमुना का पूजन करके भाई को भोजन कराए। भोजनोपरान्त बहन भाई के माथे पर हल्दी अक्षत से टीका करती है। भाई अपनी सामर्थ्य के अनुसार बहन को कुछ द्रव्य देता है। बाद में बहन प्रसन्नचित्त भोजन कराती है।

पौराणिक कथा

सूर्य की पुत्री संज्ञा से सूर्य को एक पुत्र यमराज तथा एक पुत्री यमुना थी। संज्ञा सूर्य का तेज न सहन कर सकने के कारण एक बार अपनी छाया का निर्माण कर और उसे ही अपने

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

पुत्र तथा कन्या को सौंप कर भाग गई थी। छाया का यमराज और यमुना से प्रेम-सम्बन्ध नहीं था। किन्तु यमराज और यमुना में परस्पर बहुत प्रेम था। यमुना अपने भाई यमराज के यहाँ बराबर जातीं और उनकी सुख दुःख की बातें पूछा करती। वह यमराज को अपने घर भी बुलाया करती। किन्तु वह कभी पहुँच नहीं पाते थे। एक बार कार्त्तिक शुक्लपक्ष की द्वितीया के दिन यमराज अपनी बहन यमुना के घर पहुँच ही गए। यमुना ने अपने सहोदर भाई का बड़ा आदर-सत्कार किया, अनेक प्रकार के पकवान खिलाए तथा उन्हें टीका काढ़ा। यमराज अपनी बहन के इस सत्कार से परम प्रसन्न हुए और यमुना को उन्होंने खूब भेंट-पुरस्कार भी दिए। जब वह चलने लगे, तो यमुना से और भी कोई मनोवांछित चीज माँगने का अनुरोध किया। यमुना परोपकारिणी थीं। उन्होंने कहा—'भैया! आप मुझे कुछ चीज़ देना चाहते हैं तो यही वरदान दीजिए कि आज के दिन प्रति वर्ष आप मेरे घर आया करें और मेरा आदर-सत्कार स्वीकार किया करें। और, इसी प्रकार जो भाई अपनी बहन के घर जाकर बहन का आतिथ्य स्वीकार करे तथा उसे भेंट दे, उसकी सब अभिलाषाएँ आप पूर्ण किया करें तथा उसे आपका भय न हो।'

यमुना की इस प्रार्थना को यमराज ने स्वीकार कर लिया, और तभी से बहन के घर जाकर भाई की पूजा-भेंट की यह पावन प्रथा प्रचलित हो गई।

लोक कथा

सात बहनों के बीच में सबसे छोटा एक बहुत दुलारा भाई था। अकेला होने के कारण उसका लालन-पालन बहुत

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

लाड़ प्यार से हुआ था। किसी का कटु वचन सुनने को उसे नहीं मिला था। जब वह बड़ा हुआ, तो उसकी सगाई हो गई। वरक्षा की रस्म पूरी हो गई और लगन का समय समीप आ गया। माता ने पुत्र से कहा –'बेटा! अब तू जाकर अपनी बहनों को लिवा ला।' संयोग से छै बहनों की शादी तो बहुत दूर-दूर हुई थी, छोटी बहन समीप में ही व्याही थी।

बेटे ने कहा--"मा! मैं इतनी दूर-दूर कैसे अकेला जा सकता हूँ। समय भी बहुत समीप आ गया है। छोटी बहिन समीप है, उसे अकेले बुला लिया जाय, तो क्या बुरा है?"

माता राज़ी हो गई। भाई छोटी बहिन को लिवाने के लिए उसके घर पहुँचा। संयोग से उस दिन भैया दूज की तिथि थी। बहिन द्वार के बाहर भाई की प्रतिमा बनाकर उसका पूजन कर रही थी। उसने भाई को आते देख लिया। बहिन जब पूजा कर चुकी तब भाई से बातें करती हुई बोली-- "भैया! क्षमा करना, मैंने तुम्हें पहचाना नहीं था।" भाई चुप रह गया और बहिन के साथ घर के भीतर चला गया।

बहुत दिनों बाद अपने प्यारे भाई को अपने घर आया देखकर बहिन की प्रसन्नता की कोई सीमा नहीं थी। उसने अपनी पड़ोसिनों से भाई के लिए ज्यौनार तैयार करने की सलाह ली। तब उसने दूध में चावल पकाकर खीर बनाई, पूड़ियाँ और पकवान बनवाए तथा भाई को विधिवत् भोजन कराया। भोजन के बाद भाई ने अपने आने का प्रयोजन कहा मेरा विवाह निश्चित हो चुका है, तुम्हें कल प्रातः मेरे साथ चलना है।' बहिन प्रसन्नता से गद्गद हो गई। और बोली --"भैया! आज तुम विश्राम करो, कल चले जाना, मैं परसों आ जाऊँगी।"

दूसरे दिन अँधेरी रात में ही बहिन ने भाई को मार्ग में खाने के लिए कुछ पकवान बनाकर साथ ले जाने के इरादे से

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

आटा पीसना शुरू किया। जिस गेहूँ का वह आटा पीस रही थीं, उसमें विषैले सर्प की हड्डियाँ थीं। उसने हड्डियाँ भी पीस दी और उसी की पूड़ी बनाकर दूसरे दिन भाई को मार्ग में खाने के लिए दे दीं। उसने एक पूड़ी रख ली थी। जब भाई चला गया, तो उसने वह पूड़ी कुत्ते को खाने के लिए दी। कुत्ता वह पूड़ी खाते ही मर गया। बहन ने जब यह भयंकर दृश्य देखा, तो उसका चित्त विह्वल हो गया, वह तुरन्त सब काम-धाम छोड़कर भाई के पीछे-पीछे दौड़ी। बहुत दूर जाने पर उसने देखा कि उसका भाई एक वृक्ष की छाया में सो रहा है और भोजन उसी वृक्ष की शाखा में बँधा हुआ नीचे लटक रहा है। उसने चुपचाप उस भोजन को ज़मीन के नीचे गाड़ दिया। कुछ देर बाद जब भाई सोकर उठा, तो वहाँ बहिन को देखकर परम प्रसन्न हुआ। तब बहिन ने अपने पास से उसे खाने के लिए दूसरी सामग्री दी। भोजन के बाद भाई को प्यास लगी, तो बहिन उसके लिए पानी तलाश करती हुई एक सरोवर के समीप पहुँची। उसने वहाँ देखा कि एक बढ़ई साही के काँटे बटोर रहा है। इस व्यर्थ के काम में लगे हुए बढ़ई को देखकर बहिन को कौतूहल हुआ। उसने पूछा—"भाई! तुम इन काँटों का क्या करोगे, यदि कोई हानि न हो, तो मुझे भी इसका प्रयोजन बता दो।"

बढ़ई बोला—"बहिन! ये काँटे मैं सात बहिनों के उस एकलौते भाई के लिए इकट्ठे कर रहा हूँ, जिसका विवाह होनेवाला है और जो अकाल मृत्यु के मुख में है। इन काँटों से उसकी रक्षा की जा सकेगी, अन्यथा वह शीघ्र ही मर जायगा।"

बहिन बोली—"भाई! वह अकाल मृत्यु कैसे आएगी और इन काँटों से उसकी रक्षा कैसे होगी?

बढ़ई बोला—"अभी थोड़ी देर बाद उसको साँप काट लेगा,

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

जिससे वह तत्काल मर सकता है, किन्तु यदि कोई इन काँटों को ले जाकर गालियाँ देते हुए उसके मुँह से छुआ देगा, तो वह बच सकता है। इसी प्रकार जहाँ ब्याहने जायगा, वहाँ विवाह के दिन ही ऊपर से घर का दरवाज़ा गिर पड़ने के कारण वह दबकर मर सकता है, किन्तु यदि कोई बरात आने के दिन उस दरवाज़े पर सोने की ध्वजा चढ़ा देगा, तो वह बच सकता है। इसी तरह जब उसकी भाँवर पड़ती होगी, तो एक सिंह उसे उठाकर भागने के लिए आयेगा। किन्तु यदि कोई हरे जौ का पूला उसके सामने डाल देगा और एक काँटा विवाह मण्डप में खोंस देगा, तो सिंह भाग जायगा और वह बच सकता है।"

बहिन ने कहा—"भाई! जिसके लिए तुम ये काँटे इकट्ठे कर रहे हो, वह मेरा इकलौता भाई है। हम सात बहिनें हैं। हम सबके बीच में वही अकेला भाई है। उसी का विवाह होनेवाला है और अभी-अभी वह विष से मिली हुई रोटी खाने से बचा है। तुम्हारा कहना सत्य है। मेरा भी हृदय काँप रहा है। यदि तुम ये काँटे मुझे दे दो, तो मैं तुम्हारे बताए उपायों से उसे बचा लूँगी।"

बढ़ई ने उसे साही के तीनों काँटे दे दिए। फिर तो वह उसी क्षण पानी के साथ उन काँटों को लेकर भाई को गाली देती हुई उसके समीप पहुँची और उन काँटों को उसके मुख से छुआ दिया। भाई अचम्भे में पड़ गया। उसने बहुतेरा पूछा, किन्तु बहिन ने कोई उत्तर नहीं दिया और ऊट-पटाँग की बातें ही करती रही। भाई ने समझा कि बहिन पगली हो गई है। उसे चुपचाप लेकर वह घर पहुँचा। जब लगन चढ़ाने का समय आया, तो बहिन फिर पागलों की तरह भाई को गालियाँ देने लगी और उसे अनेक तरह से शाप देने लगी।

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

उसने कहा लगन पहले मेरे हाथ पर रखी जायगी, तब भाई के हाथ पर रखी जायगी। वह यही कह-कहकर चिल्लाने और ज़िद करने लगी। तब लोगों ने लगन पहले उसके हाथ में रखी। उसने उसी में साही का काँटा खोंस दिया। फिर लगन भाई के हाथ में रखी गई। इसी तरह विवाह के प्रत्येक कार्यों में वह पहले खुद भाग लेती, फिर भाई को भाग लेने देती। बरात में भी वह शामिल हुई और भाई की ससुराल पहुँचकर उसने श्वशुर के दरवाजे पर सोने का छत्र चढ़ाया। जब विवाह होने लगा और भाँवर पड़ने का समय आया, तो संयोग से बहिन जनवासे में ही सो गई थी। वहाँ मण्डप में भाई मूर्च्छित होकर गिर पड़ा। जब बहिन को बताया गया तो वह पागलों की भाँति गाली बकती हुई दौड़ी आई। वह विवाह मण्डप में पहुँची ही थी कि उधर से एक भयानक सिंह दहाड़ते हुए आ गया। बहिन पहिले ही से तैयार होकर आई थी, सिंह के सामने उसने हरे जौ का पूला डाल दिया और मण्डप में काँटा खोंस दिया। सिंह वापस चला गया। भाई का विवाह सकुशल सम्पन्न हो गया। सब कार्य पूरा कराकर भाई के साथ वह अपने घर वापस आ गई।

इसी प्रकार जब भाई-भौजाई को एक संग सोने का अवसर आया, तो उस पगली बहिन ने जिद करके दोनों के मध्य में सोने का हंगामा मचाया। सब हैरान थे, किन्तु कोई चारा न था। उसकी इच्छा पूरी की गई। जब भाई-भौजाई सो गए, तो ऊपर से एक भयंकर सर्प नीचे उतर कर भाई को काटने के लिए आगे बढ़ा। बहिन ने उसे देखते ही मार डाला और उसे एक बर्तन के नीचे डाल दिया। इस प्रकार अपना सब कर्तव्य पूरा करके वह कई दिनों के बाद सोने गई। इधर दूसरे दिन जब सब कार्य समाप्त हो गया, तो उसके पागलपन से

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

परेशान परिवारवालों ने माता की सलाह से उसकी विदाई की तैयारी की। सब सामान मँगाया गया, किन्तु वह तब तक सोकर उठी ही नहीं। जगाने पर भी सोती ही रही। अन्त में दोपहर के समय एकाएक उठ बैठी और अब सबसे ठीक ढंग से बातें करने लगी। सब लोग आश्चर्य में पड़कर उससे पूछने लगे कि—आखिरकार तुझे यह सब पागलपन क्यों सूझा था? तब उसने सारी कहानी बताई और सबको ले जाकर पिछली रात में मारे हुए उस भयानक सर्प को भी दिखलाया। सब लोग मुक्त-कण्ठ और हर्ष-भरे हृदय से उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे।

इस प्रकार अपने प्यारे भाई की रक्षा के लिए एक बहिन ने कितना त्याग, किया कितनी कितनी कठिनाइयाँ व परेशानियाँ उठाईं।

---

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

२२. गोपाष्टमी

कार्त्तिक शुक्ल अष्टमी को गोपाष्टमी अथवा गोष्ठाष्टमी भी कहते हैं। यह व्रत गाय के प्रति हमारे देश की प्राचीन निष्ठा का प्रतीक है। सनातन धर्मानुयायी हिंदू समाज में गाय का बहुत ऊँचा स्थान है। गोपाष्टमी उनके लिए एक अनिवार्य व्रत है। गोपाष्टमी का अधिक प्रचलन व्रज भूमि तथा राजस्थान की ओर है। गोशालाओं आदि में इसको सार्वजनिक रूप से मनाते हैं। ऐसे उपयोगी व्रत का महत्त्व प्रत्येक हिन्दू गृहस्थ के लिए है।

विधि

कार्त्तिक शुक्ल अष्टमी को प्रातःकाल शौचादि से निवृत्त होकर गौओं को स्नान कराएं। फिर गंध पुष्पादि से उनका पूजन करे और वस्त्र तथा अलंकार से अलंकृत करके उनके चरवाहों को भी सत्कृत करे। गौओं को गोग्रास देकर उनकी परिक्रमा करे तथा थोड़ी दूर तक उनकी सेवा करते हुए उनके साथ साथ जाय। सायंकाल चरागाह से वापस लौटने पर भी गौओं की अगवानी, अभिवादन तथा पंचोपचार से पूजन करे और उन्हें भर पेट खिलाए तथा उनके चरणों में लगी धूल को मस्तक पर धारण करे। जो लोग इस विधि से गौओं की पूजा करते हैं, उन्हें सब प्रकार की अभीष्ट सिद्धि मिलती है।

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

२३. देवोत्थापिनी एकादशी

देवोत्थापिनी एकादशी यह कार्त्तिक शुक्ल एकादशी को मनाई जाती है। कहीं-कहीं इसे लोग देवठन, डिठवन और प्रबोधिनी आदि के नाम से मनाते हैं। वर्षा के चार माह-आषाढ़ शुक्ल एकादशी से कार्त्तिक शुक्ल एकादशी तक-विवाह आदि मांगलिक कार्य बन्द रहते हैं। प्रबोधिनी से ये कार्य फिर आरम्भ होते हैं; अतएव इसका विशेष महत्त्व है। ईख की कटाई भी आज ही से शुरू की जाती है। आज ही पहली बार घर में ईख लाते हैं। इसकी पूजा की जाती है, उसे चूसते अथवा गुड़ बनाकर खाते हैं। इस व्रत का विधान इस प्रकार है:—

विधि

प्रातःकाल नित्य कर्म से निवृत्त होकर पूरे दिन का व्रत रक्खे। यदि सामर्थ्य न हो, तो कन्द-मूल फल का आहार करे। रात्रि के समय भगवान् विष्णु का स्तोत्र पाठ और भगवत्कथा के अनन्तर शङ्ख, घंटा, घड़ियाल आदि का वादन करते हुए भगवान् को जगाए। जगाने का मंत्र इस प्रकार है:—

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द! त्यज निद्रां जगत्पते!
त्वयि सुप्ते जगन्नाथ! जगत्सुप्तमिदं भवेत्।
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ! बाराहद्रंष्ट्रोद्धृतवसुन्धर!
हिरण्याक्षप्राणघातिन्! त्रैलोक्ये मंगलं कुरु॥

भगवान् के मन्दिर अथवा सिंहासन को विविध प्रकार की सजावट से युक्त रखकर पूजा और आरती करे। कहीं-कहीं भगवान् की मूर्ति को रथ में रख कर उसे सड़कों और गलियों में ले जाकर और फिर मन्दिर में लाकर

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

पूर्ववत् प्रतिष्ठित करते हैं। भगवान् की इस रथयात्रा में भाग लेनेवालों को विशेष पुण्य-फल मिलता है। इस प्रकार एकादशी की रात्रि में पुण्य-कथा-कीर्तन आदि करके बिताए तथा दूसरे दिन द्वादशी में पारण करे।

एकादशी वैष्णवों का व्रत है। किन्तु देवोत्थापिनी एकादशी स्मार्तों में भी विशेष लोकप्रिय है। गाँवों में तो इसे वर्ष भर की सर्वश्रेष्ठ पुण्यप्रद तिथि के रूप में मानते हैं। कार्त्तिक शुक्ल एकादशी के दिन ही कुछ लोग तुलसी-विवाह का भी आयोजन करते हैं। तुलसी वैष्णवों का परमाराध्य पौधा है। इसे 'विष्णुप्रिया' भी कहते हैं। विष्णु भगवान् की स्वर्ण-मूर्ति बनाकर उसमें प्राण-प्रतिष्ठा कराने के बाद उसे फूल-मालाओं से अलंकृत कर गाजे-बाजे के साथ तुलसी-वृक्ष के समीप ले जाते हैं और वहाँ विवाह कराया जाता है। उस समय विवाह के समान ही अन्य कार्य होते हैं तथा विवाह के गीत भी गाए जाते हैं। सत्यनारायण की कथा भी कही व सुनी जाती है।

कथा

भगवान् विष्णु ने भाद्रपद की शुक्ल एकादशी को महान् आततायी शङ्खासुर का वध किया था। युद्ध में भगवान् बहुत परिश्रम के कारण थक गए, अतः वे क्षीर सागर में आषाढ़ शुक्ल एकादशी से कार्त्तिक शुक्ल एकादशी तक सोते रहे। उनके शयन के साथ ही सारे देवगण भी सो गये। उनके जागने पर सारे देवगण भी जागे और बड़ा उत्सव मनाया गया, तभी से यह पर्व धर्म-परायण लोगों के लिये बहुत प्रिय हो गया।

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

२४. कार्त्तिक पूर्णिमा

हिन्दू धर्म में, किसी व्यक्ति से कुछ पाप हो जाय और वह पाप के प्रति मन में पश्चात्ताप रखता हुआ गंगा-यमुना अथवा भारत की किसी अन्य पुण्यदायिनी नदी में स्नान कर ले, तो उसका पाप धुल जाता है। उसका प्रायश्चित्त पूर्ण माना जाता है। फिर कार्त्तिक की पूर्णिमा तो विशेषतया पापों को धोनेवाली होती है। प्रायः सभी जाने-अनजाने में कुछ-न-कुछ पाप कर बैठते हैं। इसी कारण भारी संख्या में लोग बड़ी निष्ठा से नदियों में स्नान करते हैं। नदियों में गंगा सबसे अधिक पुण्यदायिनी मानी गई। अतएव गंगा में स्नान का महत्त्व सबसे अधिक है। हरिद्वार से लेकर कलकत्ते तक गंगातट पर बहुत विशाल मेले लगते हैं। कार्त्तिक पूर्णिमा को प्रायश्चित्त करने का इतना सरल ढंग किसी और धर्म में शायद ही मिले।

विधि

कार्त्तिक की यह पूर्णिमा यदि कृत्तिका नक्षत्र से युक्त हो, तो गंगा-स्नान करने पर परम फलदायिनी होती है। भरणी, रोहिणी होने पर भी इस दिन गंगा-स्नान का विशेष फल बताया गया है। इस पुण्य तिथि के लिये कुछ अन्य योग भी विशेष महत्त्व के बताए गए हैं। जैसे इस दिन यदि चन्द्रमा कृत्तिका नक्षत्र पर, सूर्य विशाखा नक्षत्र पर हो तो पद्मक नामक योग होता है, जो अत्यंत दुर्लभ है। इस दिन संध्या के समय चंद्रोदय होने पर छहों कृत्तिकाओं का पूजन करना चाहिए। वृषदान की विशेष महिमा है। इसी प्रकार गौ, हाथी, घोड़ा, रथ, घृतादि का दान भी शिव-पद का देनेवाला है।

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

सुवर्ण का मेष (बकरा) बनाकर दान करने से ग्रहों का चक्कर कष्टदायक नहीं होता तथा रात्रि में व्रत रखकर हरि-कीर्तन करने से सभी अभीष्टों की सिद्धि मिलती है। प्रायः लोग स्नान से पूर्व अथवा पूरे दिन का व्रत इस दिन रखते हैं।

कार्त्तिक की पूर्णिमा को ही तुलसी का जन्म-दिवस मनाया जाता है। इसी दिन गंगाजी का मृत्युलोक में अवतीर्ण हुई। अतएव इस पूर्णिमा को तुलसी तथा गंगा-जी को दीप अर्पित करने का विधान है।

कथा

त्रिपुर एक परम आततायी असुर था। किन्हीं-किन्हीं पुराणों के अनुसार यह तीन भाई थे और तीनों अन्तरिक्ष में तीन विचित्र दुर्गों की रचना करके रहते थे।

एक अन्य कथा के अनुसार त्रिपुर ने प्रयाग तीर्थ में भीषण तपस्या करके समस्त त्रैलोक्य पर अपना आतंक जमा रक्खा था। उसने विधाता से यह वरदान प्राप्त किया कि उसकी मृत्यु किसी देवता, मनुष्य, निशाचर, स्त्री तथा किसी रोग से न हो। पहले तो इसने अजर-अमर होने का वरदान माँगा था, किंतु विधाता ने यह वरदान अस्वीकार करते हुए कहा था कि इस संसार में जन्म लेकर कोई भी अजर-अमर नहीं हो सकता। विधाता का यह वरदान पाकर त्रिपुर अत्यंत उपद्रवी तथा हिंसक हो गया था। उसने देवताओं तथा मनुष्यों की दुर्गति कर डाली। सबने उसकी अधीनता स्वीकार कर ली थी। एक दिन उसके नगर में देवर्षि नारदजी घूमते-घूमते पहुँच गए। त्रिपुर ने देवर्षि का विधि-वत् स्वागत-सत्कार किया और उसने अपने पराक्रम के संबंध में पूछा। देवर्षि नारद ने उसकी तेजस्विता की बड़ी प्रशंसा

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

की, जिससे वह और भी दुर्धर्ष बन गया। उसने विश्वकर्मा से तीन धातुओं का ऐसा विमान-तुल्य नगर बनवाया, जिससे वह निर्बाध रूप से सर्वत्र आ जा सकता था। एक से स्वर्ग में, एक से पाताल में तथा एक से मृत्युलोक में। नारदजी के कथनानुसार उसने बहुत से दैत्यों को भी बन्दी बना लिया था। किंतु उसके मुख्य शत्रु थे देवगण, जिन्हें सर्वत्र और सर्वदा वह विविधप्रकार का कष्ट दिया करता था।

अन्त में जब देवगण अत्यंत परेशान और इधर-उधर भागते-भागते थक गए, तो वे भगवान् विष्णु की शरण में गए, और उनसे रक्षा की प्रार्थना की। भगवान् विष्णु ने कहा—'वह असुर विधाता के वरदान से ऐसा दुर्धष बन गया है। उसकी मृत्यु का कोई भी उपाय सम्भव नहीं दिखता, क्योंकि ब्रह्मा ने उसे सब प्रकार से अवध्य बना दिया है। उसे मारने के लिए किसी ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता है, जो न स्त्री हो न पुरुष, न देवता हो न मनुष्य, न राक्षस हो और न गन्धर्व। जिसके माता-पिता, भाई-बहिन भी न हों। बताइए, ऐसा व्यक्ति कौन हो सकता है?' सभी देवता चिंतित हो गए, क्योंकि ऐसे किसी व्यक्ति का उन्हें ज्ञान न था। कुछ देर चुप रहने के अनन्तर भगवान् विष्णु ने स्वयं कहा—'अच्छी बात है' मैंने ऐसे महापुरुष का निश्चय कर लिया है, जो उस आततायी असुर का विनाश करने में पूर्ण समर्थ हैं। वह है आशुतोष भगवान् शंकर। हम सबको उन्हीं की शरण में चलना चाहिए।'

भगवान् विष्णु का आश्वासन सुनकर देवगण परम प्रसन्न हुए। वे सभी जानते थे कि भगवान् शंकर ही त्रिगुणातीत सनातन महापुरुष हैं। जन्म और जरा-मृत्यु से वर्जित सदाशिव स्वरूप की कल्पना माता-पिता आदि से विहीन हैं। सब

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

देवगण भगवान् विष्णु के साथ कैलास शिखर पर विराजमान शंकर जी के समीप पहुँचे। वहाँ सबने भगवान् शंकर की बड़ी विनय की। भगवान् आशुतोष पसीज गए। उन्होंने त्रिपुर के वध का आश्वासन दिया। सभी देवताओं में प्रसन्नता की लहर दौड़ गई तथा धरती पर सुख-शांति की सरिता उमड़ पड़ी। इधर देवर्षि नारद ने त्रिपुर के यहाँ जाकर उसे कैलास-शिखर पर आक्रमण करने की उत्तेजना दी। अन्ततः शंकरजी व त्रिपुर का भीषण युद्ध आरंभ हो गया और तीन दिनों की प्रलयकारी युद्ध में त्रिपुर मारा गया। उसके मारे जाने पर त्रैलोक्य सुखी हुआ और सर्वत्र दीप जलाकर प्रसन्नता मनाई गई। जिस पुण्य तिथि को त्रिपुर मारा गया था वह यही कार्त्तिक की पूर्णिमा थी। तभी से इस दिन लोग स्नान-दान के साथ महोत्सव मनाते आ रहे हैं।

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

२५. संकटा चौथ

माघ-कृष्ण-चतुर्थी, जो कि विनायक गणेश जी का जन्म-दिन है, को संकष्टहर चतुर्थी अथवा संकटा चौथ कहते हैं। इस दिन का व्रत बिलकुल निर्जला होता है।

विधि

तिल, गुड़ को कूटकर तिलकुटा बना लें। एक पट्टे (पीढ़ा) पर तिलकुटे के गणेशजी और सुपारी बनाकर गुलाबी रेशम से दोनों को लपेटें। ताला ताली व चार बत्ती का आटे का दिया भी पट्टे पर रखें। हल्दी, चावल रोली से गणेशजी की पूजा करें। दिया जला लें। चौदह मैदे की मीठी फीकी आस तथा तिलकुटे का बायना काढ़ें। यदि कुंडवारा हो, तो चौदह जगह तिलकुटा आँगी या चोली और कुछ नक़द रखकर काढ़े। तिलकुटा और मीठी फीकी आस गणेशजी के सामने भी रक्खें। घर की बुज़ुर्ग या प्रोहतानी ताले पट्टे पर बजाकर कहे "चौताली का दीवला चार पहर की रात ....(मर्दों का नाम ले) संकट भागिगो संकट चौथ की रात।" फिर सब स्त्री अक्षत हाथ में लेकर कहानी कहें-सुनें। रात को चंद्रोदय के पश्चात् चंद्रमा को अर्घ्य देकर भोजन करें।

कथा

एक विधवा के एक लड़का था। विधवा संकटा चौथ का व्रत और पूजन करती थी। लड़का जब बड़ा हुआ, तो उसके साथी उसे चिढ़ाने लगे कि तेरी मा संकट-चौथ नहीं गटक-चौथ करती है और ख़ूब माल मिठाई खाती है। यह सुनकर लड़के को बहुत बुरा लगा। वह अपनी मा से बोला—"मा,

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

मैं गाँव छोड़कर जा रहा हूँ। नौकरी मिल जाने पर तुमको भी ले जाऊँगा, बिदा करते समय मा ने उसे पूजा का तिलकुटा दिया और कहा—"बेटा, जब तुझ पर कोई मुसीबत आये, तो इस तिलकुटे को चारों ओर बिखेरकर गणेशजी का ध्यान करना। यदि मैं संकटा चौथ करती हूँ, तो यह अवश्य तेरी सहायता करेंगे।

लड़का घूमता हुआ एक ऐसे शहर में पहुँचा जहाँ छै महीने में एक आवाँ पकता था जबकि उस आँवें में एक नर-बलि दी जाती थी इसलिये आवाँ पकाने के लिये प्रत्येक घर से बारी-बारी से एक आदमी आंवे में बलि होता था। संयोगवश लड़का जिस घर में ठहरा, उस घर के ही एक आदमी को इस बार बलि होना था। लड़के ने घरवालों से हठ किया कि उसे ही बलि के लिये भेजा जाय और अंत में वही गया। उसके चारो ओर बर्तन लगाकर आग जला दी गई। लड़के ने अपनी मा का दिया तिलकुटा चारों ओर छिड़क दिया और गणेशजी का ध्यान करने लगा। आवाँ छ महीने में पकता था, वह तीन दिन में ही पककर तैयार हो गया। राजा ने जब बर्तन हटवाये तो देखा लड़का आनंद से बैठा है और उसके चारों ओर तिल के पेड़ निकल आये हैं। राजा ने इसका कारण लड़के से पूछा। लड़के ने सारी बातें बता दीं। राजा ने लड़के की मा को भी अपने शहर में बुला लिया और आज्ञा करा दी कि अब से प्रत्येक नागरिक संकटा चौथ का व्रत करेगा। "जैसे उसके बेटे का संकट दूर हुआ वैसे सबके बेटे चिरंजीवी रहें।" कहकर अक्षत चाँद पर चढ़ा दे और विनायक की कथा कहें। एक दादी-पोती थीं। गणेश चौथ को सब घरवाले गणेश मंदिर में दर्शन करने जाने लगे। पोती छोटी थी, उसे सबने मना कर दिया। पोती ने दादी से दो पैसे माँगे और जिद्द की कि मैं

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

भी जाऊँगी। बालहठ के कारण दादी को उसे पैसे देने पड़े और जाने के लिये कह दिया। मंदिर में अथाह भीड़ के कारण लड़की को गणेशजी के दर्शन न हो सके। वह वहीं खड़ी रही, उसने एक पैसे की माला और एक पैसे के दो लड्डू ले लिये। रात के बारह बजे जब मंदिर से सभी दर्शनार्थी चले गये, तब वह एकांत पाकर मंदिर में घुस गयी। ध्यान-पूर्वक गणेशजी की आराधना की और पुष्प-माला उनके गले में डाल दी। पुनः लड्डू सामने रखकर कहने लगी--"भगवान् प्रसाद खाओ। गणेशजी जब न हिले और प्रसाद ग्रहण न किया, तो बालिका को रोना आ गया और वह कहने लगी—"मेरे हाथ का आप क्यों नहीं खाते, मुझसे क्या गलती हुई।" प्रेम-विह्वल होकर गणेशजी प्रकट हुए। उन्होंने प्रसाद खाया और अपने ऊपर की मालायें सब लड़की को पहना दीं और उससे कहा--"अब तुम घर जाओ" लड़की ने कहा—"डर लगता है।" गणेशजी ने कहा—"आँखें बंद करो, घर पहुँच जाओगी।"

इधर दादी लड़की के खो जाने से बड़ी चिन्तित थी। वह सबसे उसके बारे में पूछ रही थी। इतने में घर की कुंडी किसी ने खटखटाई। उसने जल्दी से दरवाज़ा खोला। पोती को देख उसे बड़ी खुशी हुई। पोती ज़ेवरों के बोझ से दबी जा रही थी। दादी ने पूछा, ये ज़ेवर कहाँ से आये, तो लड़की ने सारी बात बता दी। दादी बोली--"सच्चे प्रेम की हर जगह विजय होती है।" यह कहानी कहकर अक्षत को तिलकुट के बने गणेशजी पर चढ़ा दें।

---

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

२६. मकर-संक्रान्ति

संक्रान्ति का अर्थ है एक स्थान से दूसरे स्थान में जाना अथवा एक का दूसरे में मिलना। सूर्य जब एक राशि से दूसरी राशि पर जाता है, तो उस दिन संक्रान्ति आती है। सूर्य जब धन राशि से मकर राशि पर पहुँचता है, तो मकर संक्रान्ति होती है। पृथ्वी सूर्य के चारों ओर प्रदक्षिणा करती है। सूर्य के चारो ओर परिक्रमा का जो मार्ग है, उसे क्रान्तिवृत्त कहते हैं। कुल सत्ताइस नक्षत्र हैं तथा उनकी बारह राशियाँ हैं, जिनके नाम हैं मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुम्भ और मीन। पृथ्वी एक वर्ष में सूर्य के चारों ओर की एक प्रदक्षिणा पूरी करती है। इसी के प्रत्येक बारहवें मास की अवधि को एक सौर मास कहते हैं। जिस प्रकार पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है, उसी प्रकार चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा करता है। वह एक मास में पृथ्वी की परिक्रमा पूरी करता है, जिसे चन्द्रमास कहते हैं।

ये संक्रान्तियाँ, जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, बारह होती हैं। किंतु इनमें मेष तथा मकर की संक्रान्तियाँ प्रमुख हैं। मेष संक्रान्ति को उत्तर-भारत के देहातों में 'सतुआ संक्रान्ति' अथवा 'सतुआन' तथा मकर संक्रान्ति को 'खिचड़ी' भी कहते हैं। कृषि-प्रधान देश में 'सतुआ' तथा 'खिचड़ी'-जैसे लोकप्रिय तथा सुगम खाद्यान्नों के नाम पर इनके नामकरण किए गए हैं। का तात्पर्य यह है कि इन दोनों खाद्य पदार्थों की उस समय सुलभता होती है। मेष संक्रान्ति अथवा चैत्र मास में जौ, चना, मटर आदि अन्नों की कटाई होती है, जिससे सतुआ बनता है तथा मकर संक्रान्ति अथवा पौष या माघ मास में नया चावल तथा उड़द सुलभ होता है, खिचड़ी बनती है। ग्रामों में रहने

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

वाले लोगों के लिए ये दोनों खाद्य पदार्थ सुलभ तथा सुविधा-जनक होते हैं। अतएव इन त्यौहारों का वहाँ विशेष महत्त्व है। लोग खिचड़ी के दिन प्रातःकाल ही स्नानादि से निवृत्त होकर खिचड़ी नमक और घी आदि काढ़ते और सुपात्र को दान कर देते हैं। सतुआन के दिन सत्तू के दान का बड़ा पुण्य माना गया है! मकर संक्रान्ति के दिन तीर्थराज प्रयाग तथा गंगा सागर में बहुत बड़ा मेला लगता है। इसके अतिरिक्त गंगा आदि पुण्य नदियों के तट पर अनेक जगह छोटे-मोटे मेले भी लगते हैं।

विधि

मकर संक्रान्ति अथवा खिचड़ी के दिन ब्राह्म मुहूर्त में उठकर शौचादि से निवृत्त हो किसी नदी अथवा सरोवर में स्नान करना चाहिए। स्नान के पूर्व तिल के तेल की मालिश करनी चाहिये। तिल का इस तिथि में विशेष महत्त्व है। तिल-युक्त जल से स्नान, तिल का बना हुआ उबटन, तिल का हवन, तिल मिश्रित जल का पान, तिल का भक्षण—ये छ कार्य तिल के हों, तो संक्रान्ति का फल बढ़ जाता है। स्नान के अनन्तर चंदन से अष्टदल कमल की रचना कर उसमें सूर्य-नारायण का आवाहन तथा विधिवत् पूजन करना चाहिए। फिर दक्षिणा समेत सब सामग्री ब्राह्मण को देनी चाहिए। घृत और कम्बल के दान का विशेष महत्त्व है। संक्रान्ति के दिन गंगा स्नान और गंगा तट पर दान की अत्यधिक महिमा है। तिल के लड्डू के साथ खिचड़ी का दान करने का विशेष फल है। महाराष्ट्र में विवाहित स्त्रियाँ पहली संक्रान्ति को तेल, कपास, नमक आदि का दान सौभाग्यवती स्त्रियों को करती हैं। सौभाग्यवती स्त्रियाँ अपनी सखी-सहेलियों को रोरी

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

लगाती हैं, तिल तथा हल्दी के साथ गुड़ देती हैं। बंगाल में भी इस तिथि को दान की विशेष महिमा है।

कथा

जाबालि ऋषि अपने समय में एक पहुँचे हुए महापुरुष थे। एक बार सुनाग नामक मुनि ने उनसे मकर संक्रान्ति का माहात्म्य बताते हुए कहा था कि मकर संक्रान्ति के अवसर पर शिवजी की प्रतिमा को घृत से अभिषिक्त करके उस पर तिल के फूल तथा बेल-पत्र चढ़ाने की विशेष महिमा है। तिल का फूल न मिले, तो कमल का फूल उससे भी बढ़कर है। धूप, दीप, नैवेद्य आदि के साथ प्रार्थना और प्रदक्षिणा भी विशेष फल-देनेवाली होती है। रात्रि में जागरण के साथ 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्र का जप तथा प्रातःकाल स्नान एवं पूजा करने से शिव-गति प्राप्त होती तथा जीवन में दरिद्रता व विपदा दोनों का विनाश होता है। मकर संक्रान्ति पर दधि-मंथन दान का भी महत्त्व है। अखण्ड सुख-सौभाग्य एवं धन-धान्य तथा सन्तति की प्राप्ति के लिए यशोदा एवं कृष्ण की प्रतिमाओं का विधिपूर्वक पूजन करे और दधि-मंथन की सभी वस्तुओं के साथ प्रतिमाएँ किसी सुपात्र को दान कर दे।

एक बार कृपाचार्य की पत्नी कृपी ने दुर्वासा ऋषि से अपनी दरिद्रता तथा कोई संतान न होने का दुःख दूर करने का उपाय पूछा था, तो दुर्वासा ने उन्हें यही दधि-मंथन व्रत करने का उपाय बताया था, जिससे उनका दुःख दारिद्र्य दूर हो गया था।

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

२७. वसंत पंचमी

हमारे देश में छ ऋतुएँ होती हैं, वसंत इन छहों का राजा माना गया है। प्राचीन ज्योतिष के अनुसार वसंत ऋतु के दो महीने हैं—चैत्र तथा वैशाख। यद्यपि आजकल के लिये यह काल-गणना उचित नहीं प्रतीत होती, तथापि इसमें अभी तक कोई संशोधन नहीं हुआ और पुराणकर्ताओं ने इसकी संगति बैठाने के लिए कुछ मनोरंजक कथाएँ प्रस्तुत कर दी हैं। यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठता है कि जब वसंत का आगमन चैत्र से होता है, तो माघ शुक्लपक्ष की पंचमी को वसंतोत्सव क्यों मनाया जाता है ? एक पुराणकार ने इसका समाधान यों किया है। उन्होंने कहा है कि एक बार सभी ऋतुओं ने स्वेच्छा से अपने राजा वसंत का अभिनंदन किया और उन्हें अपनी ओर से भेंटस्वरूप प्रत्येक ने अपनी-अपनी अवधि के आठ दिन दे दिए। पाँचों ऋतुओं के आठ-आठ दिन कुल मिलाकर चालीस दिन होते हैं, जो चैत्र बदी प्रतिपदा के चालीस दिन पूर्व माघ शुक्ल पंचमी को आता है। वसंत पंचमी वसंतागमन की अभिनंदन तिथि है। परम प्राचीन-काल से इस महोत्सव को हमारे देश में अपूर्व उत्साह से मनाया जाता रहा है। शिशिर परम कष्टदायिनी ऋतु है। उसमें मनुष्य और पशु-पक्षी तो दूर - वृक्षों और लताओं तथा जलादि प्राकृतिक दृश्यों की शोभा क्षीण हो जाती है और सभी कष्ट पूर्ण जीवन बिताते हुए दिखाई पड़ते हैं। अतः वसंत के आगमन में चराचर की यह स्वच्छंद प्रसन्नता बहुत स्वाभाविक है। आरंभ में यह विशुद्ध ऋतु संबंधी महोत्सव था, किंतु बाद में हिंदू धर्मशास्त्रकारों तथा पौराणिकों ने इसके साथ कुछ धार्मिक कथाएँ भी जोड़ दी हैं।

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

विधि

वसंत पंचमी को श्री पंचमी भी कहा गया है। इस दिन विद्या की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती का पूजन किया जाता है, जिसकी विधि इस प्रकार है--पंचमी के एक दिन पूर्व अर्थात् चतुर्थी को संयम और सदाचार-पूर्ण जीवन व्यतीत कर पंचमी के दिन प्रातःकाल स्नान कर संध्या, तर्पण आदि नित्य कर्मों से निवृत्त होकर भक्ति-पूर्वक कलश की स्थापना करे। तदनंतर विनायक गणेश, सूर्य, विष्णु, शंकर आदि की धूप, दीप नैवेद्य आदि से विधिवत् पूजा करे और तब अभीष्ट फल देनेवाली सरस्वती की पूजा तथा प्रार्थना करे। उन्हें वसंती रंग का वस्त्र तथा पुष्प चढ़ाए तथा स्वयं भी ऐसा ही वस्त्र धारण करे।

एक दूसरी शास्त्रीय विधि के अनुसार वसंत पंचमी को लक्ष्मी-समेत भगवान् विष्णु का पूजन करना चाहिए। प्रातः-काल तिल का तेल लगाकर स्नान करके पीत वस्त्र धारण कर लक्ष्मी समेत भगवान् विष्णु के मंदिर में जाकर अबीर, गुलाल, गन्ध, पीत पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्यादि से पूजन करे तथा गायन-वादन का सुंदर आयोजन करे।

कुछ धर्मशास्त्रियों के मत से इस तिथि को रति एवं कामदेव का भी पूजन विहित है। संभवतः इसका कारण यह है कि पुराणों में वसंत और कामदेव—दोनों को परस्पर अनन्य मित्र तथा सहचर के रूप में वर्णन किया गया है। पूजन की विधि प्रतिमा की स्थापना अथवा कुंकुम से कलश पर उनकी रचना करके की जाती है। रति-काम की प्रार्थना में अपने दांपत्य एवं पारिवारिक जीवन को सुख-समृद्धि से पूर्ण करने की प्रार्थना की जाती है।

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

वसंत पंचमी के दिन नव-शस्येष्टि अथवा नवान्नेष्टि भी की जाती है। गृहस्थ लोग अपनी तैयार फसलों के खेतों से नूतन अन्न का पौधा लेकर जिस देवता का पूजन होता है, उसके सम्मुख रखते हैं। जौ, चना, आम, तिल आदि के नवीन पौधे भी देव-मंदिर में अथवा पूजन-स्थल पर रक्खे जाते हैं। फिर नूतन अन्न का भोग लगाकर उसी दिन से गृहस्थ लोग स्वयं भी नूतन अन्न खाते हैं।

वसंत पंचमी के दिन ही बंगाल में सरस्वती-पूजन होता है और इसको सरस्वती-पूजा कहते हैं। बच्चों के खेल-कूद कराकर उनकी योग्यता नापी जाती है। सरस्वती की मूर्ति प्रत्येक घर में स्थापित की जाती है, जिसका विसर्जन दूसरे दिन नदी अथवा तालाब में कर दिया जाता है।

वसंत पंचमी के दिन व्रत का कोई विधान नहीं है, किंतु देव-पूजन तक भोजन नहीं ग्रहण करना चाहिए। पूजन दोपहर में अवश्य कर लेना चाहिए। ग्रामों तथा नगरों में भी वसंत-पंचमी के दिन राग-रंग का मनोरंजन कार्य-क्रम रक्खा जाता है। रात में होलिका दहन के दिन जलाई जानेवाली होली या होलिका के निमित्त रेंड का अथवा अन्य बाँस आदि का पेड़ गाड़ा जाता है और उसके साथ कुछ लकड़ी तथा झाड़-झंखाड़ भी रख दिया जाता है।

---

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

२८. महाशिवरात्रि व्रत

फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी शिवरात्रि अथवा महाशिवरात्रि कहलाती है। इसे 'शिव तेरस' भी कहते हैं। तथापि फाल्गुन कृष्ण त्रयोदशी को इसे मनाते हैं। शैवों का यह प्रमुख त्योहार है। संसार के सभी शिवालों में बड़ी धूमधाम से आज के दिन पूजन होता है। भगवान् शिव के चौदह ज्योतिर्लिंग माने जाते हैं, प्रत्येक लिंग-मंदिर में इस दिन बहुत बड़ा मेला लगता है, जिसमें हजारों लोग दर्शनार्थ आते हैं। काशी, नैपाल, वैद्यनाथ धाम, उज्जैन आदि में बहुत बड़ा मेला लगता है। इनमें दूर-दूर के तीर्थ यात्री भाग लेते हैं। पौराणिक कथन है 'शिवजी आशुतोष हैं, केवल भाँग-धतूरा चढ़ाने तथा गाल बजाने से ही वह प्रसन्न हो जाते हैं। उनकी प्रसन्नता के लिए शिवरात्रि पावन पर्व है। जो व्यक्ति शिवरात्रि को निर्जल व्रत रखकर शिवजी का पूजन करता और रात्रि भर जागरण करके सत्संग एवं शिव-कीर्तन करता है, उसे शिव-धाम की प्राप्ति होती है। उसे फिर इस मृत्युलोक में नहीं आना पड़ता है। प्रति वर्ष किया जानेवाला 'नित्य' तथा किसी कामना से किया जानेवाला व्रत 'काम्य' कहलाता है। इस व्रत को रखने का अधिकार ब्राह्मण से लेकर चांडाल तक—सबको समान रूप से है। शिवजी का नाम भोलानाथ है, उनके दरबार में छुआछूत का कोई प्रश्न नहीं।

विधि

पूरे दिन का यदि निर्जल व्रत रख सके, तो सर्वोत्तम अन्यथा दुग्धपान अथवा फलाहार ही कर सकते हैं। स्नानादि से निवृत्त होकर मिट्टी के पात्र में गंगा-जल (अथवा कोई शुद्ध

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

जल), धतूरे एवं मंदार के पुष्प, बेलपत्र, चन्दन, अक्षत, ईख की गड़ेरी आदि के साथ शंकरजी पर चढ़ाएँ। यदि पास-पड़ोस में कोई शिव लिंग न हो तो शुद्ध गीली मिट्टी की पार्थिव प्रतिमा बनाकर उस पर यह सब चढ़ा दें। रात्रि-भर का जागरण करना आवश्यक है। इस समय रुद्राष्टाध्यायी (रुद्री), शिवपुराण, शिव महिम्न स्तोत्र, रामचरित मानस के 'नमामीशमीशान' आदि स्तोत्रों का पाठ करना तथा शिव सम्बन्धी अन्य धार्मिक कथा का सुनना सुनाना परम फलदायी है। यदि रुद्राभिषेक करा सके, तो अत्युत्तम। दूसरे दिन प्रातःकाल स्नानादि से निवृत्त होकर जौ, तिल तथा खीर की १०८ आहुतियाँ 'त्र्यंबकं यजामहे' आदि मंत्र से दे। फिर ब्राह्मणों को यथाशक्ति दक्षिणा दे तथा भोजन करावे और तब स्वयं भोजन ग्रहण करे।

कथा

प्रत्यंत नामक देश में एक व्याध रहता था, जो प्रतिदिन पशु-पक्षियों को बेचकर अपनी जीविका चलाता था। वह एक सेठ का कर्ज़दार था। समय पर रुपया न दे सकने के कारण सेठ ने उसे हवालात में बंद करा दिया था। हवालात कोई जेल नहीं, शिवजी का एक मंदिर ही था। संयोग से उस दिन फाल्गुन कृष्ण त्रयोदशी की तिथि थी, शिवालय में धर्मनिष्ठ व्यक्तियों का आना-जाना लगा था और उनमें से अनेक लोग शिवजी के स्तोत्रादि का पाठ कर रहे थे, कुछ लोग महाशिवरात्रि का माहात्म्य कह-सुन रहे थे। दूसरे दिन महाशिवरात्रि को सेठ ने व्याध को शीघ्र कर्ज़ चुका देने की शर्त पर छोड़ दिया। व्याध हवालात से छूटकर फिर जंगल की ओर गया, क्योंकि उसकी जीविका का वही एक साधन था।

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

दुर्भाग्य-वश उसे उस दिन कोई शिकार न मिला। बेचारा भूख से व्याकुल हो गया। वह शिकार की तलाश में इधर-उधर घूम रहा था कि उसे एक तालाब दिखाई पड़ा। उसने सोचा कि पानी पीने के लिए यहाँ कोई न कोई पशु अवश्य आएगा, इसी जगह कहीं छिपकर बैठा जाय। अतः वह एक काँटेदार बेल के वृक्ष पर चढ़ गया, और उसी पर अपने बैठने के लिए बेल के कुछ पत्तों को नीचे गिराने लगा। बेल के ठीक नीचे शिवलिंग स्थापित था। जो बेलपत्र व्याध ने गिराए, वे सब शिवलिंग पर ही गिरे। वे इतने अधिक थे कि शिवलिंग पूरा का पूरा ढँक गया। उधर वह दिन-भर उसी पेड़ पर बैठा रहा, किंतु एक भी पशु तालाब में पानी पीने के लिए नहीं आया। इस प्रकार व्याध का निराहार रहने के कारण महाशिवरात्रि का व्रत पूरा हो गया और बेल पत्रों के शिवलिंग पर गिराने से उसे पुण्य प्राप्त हुआ। उसकी अंतरात्मा स्वतः पवित्र हो गई। भूख और प्यास के कारण यद्यपि वह खिन्न था, तथापि उसके हृदय में सहानुभूति और करुणा की अज्ञात-ज्योति जल चुकी थी।

दिन बीत जाने के बाद रात आई। व्याध उसी पेड़ पर बैठा ही रह गया। जब रात भी एक पहर बीत गई तो एक गर्भिणी हरिणी तालाब के समीप आती हुई दिखाई पड़ी। गर्भ के भार से वह बहुत धीमे-धीमे चल रही थी। व्याध हरिणी को देखकर फूला न समाया। उसने तुरंत अपना बाण धनुष पर चढ़ाया और बाण छोड़ना ही चाहता था कि हरिणी ने चिल्लाकर उसे रोकते हुए कहा—हे "व्याध! तुम ऐसा अनर्थ क्यों कर रहे हो?"

व्याध बोला—"भला इसमें अनर्थ की क्या बात है? यह

-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-G

तो मेरी वंशगत जीविका है, मैं तो नित्य ही दश-पाँच पशु-पक्षियों का वध करता रहता हूँ।"

हरिणी बोली--ठीक है। मैं गर्भवती हूँ। मेरे गर्भ का समय पूरा हो चुका है। मेरे साथ मेरे बच्चों की मृत्यु हो जायगी। एक साथ अनेक प्राणियों के वध का तुम्हें पाप लगेगा। अतः मैं तुम्हें वचन देती हूँ कि मुझे छोड़ दो। अपने बच्चों को जन्म देकर उन्हें उनके पिता को सौंप कर तुम्हारे पास आ जाऊँगी। इसमें तनिक भी अविश्वास मत करो, मैं ऐसा अवश्य ही करूँगी।"

व्याध का चित्त सहानुभूति और करुणा से द्रवित तो था ही! उसने हरिणी को छोड़ दिया। वह पानी पीकर अपने गन्तव्य को वापस चली गई। व्याध अब किसी दूसरे जीव की आने की प्रतीक्षा करने लगा। आधी रात बीत जाने पर एक स्वर्ण के रंगों वाली ख़ूबसूरत और तन्दुरुस्त हरिणी फिर उसी तालाब के समीप मस्त चाल से आती हुई दिखाई पड़ी।

व्याध ने फिर धनुष पर बाण चढ़ाया, तो वह हरिणी भी पहिली की तरह गिड़गिड़ाकर अति विनीत भाव से बोली—"आप मुझको मारते तो हैं, परंतु मैं निवृत्त ऋतुवाली हूँ, यदि पति का संयोग होने के पूर्व ही मैं मारी जाऊँगी, तो यह अभिलाषा मेरे चित्त में लगी रह जायगी, जिससे मेरा तो अनिष्ट होगा ही, साथ में आपके लिये भी शुभ न होगा। यदि इस समय आप मुझको छोड़ देंगे, तो मैं कल अपनी प्रतिज्ञानुसार पति संभोगोपरान्त आपके पास अवश्य आ जाऊँगी।"

व्याध ने द्रवित हो इस बार भी उस हरिणी की प्रार्थना स्वीकार कर ली। वह भी पानी पीकर अपने गन्तव्य की ओर चली गई। इस दूसरी हरिणी के चले जाने के बाद व्याध

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

शिव-शिव जपता हुआ उसी पेड़ पर बैठा रहा। एक पहर रात और बीती, बीच-बीच में वह व्यर्थ का समय बिताने के लिये बेलपत्र तोड़-तोड़कर नीचे गिराता रहा जो सब-के-सब शिवलिंग पर चढ़ते जाते थे। जब एक पहर रात शेष रही, तो एक तीसरी हरिणी अपने तीन-चार बच्चों के साथ तालाब के समीप आती हुई दिखाई पड़ी। वह फिर अपना धनुष-बाण सहेज कर उसे मारने के लिए तैयार हो गया; किंतु इतने में ही वह हरिणी भी करुणापूर्ण स्वर में उससे विनीत वाणी में बोली—

"सौम्य ! मैं देख चुकी हूँ कि आपने मुझसे पूर्व आनेवाले दो जीवों को छोड़ दिया है। आपकी करुणा और सहानुभूति की चर्चा सुनकर ही मैंने इधर आने का दुःसाहस किया है। आप देख रहे हैं कि मेरे बच्चे कितने छोटे-छोटे तथा अबोध हैं। मेरे मारे जाने के बाद ये सब अनाथ हो जायँगे। किंतु यदि आप मुझे मारना ही चाहते हैं, तो कुछ क्षणों के लिए मुझे छोड़ दें, मैं इन्हें इनके पिता के सिपुर्द करके आपके पास वापस आ जाऊँगी, तब मुझे मारिएगा।" व्याध ने इस तीसरी हरिणी की प्रार्थना भी स्वीकार कर ली। वह पानी पीकर अपने बच्चों के संग अपने पति के पास वापस चली गई।

धीरे-धीरे प्रातःकाल समीप आ गया। पक्षी बोलने लगे। शीतल मंद सुगंध वायु बहने लगी। पूर्व का क्षितिज लाल हो गया। व्याध ने शिव-शिव जपते हुये बेल के कुछेक पत्ते पुनः तोड़कर नीचे गिराए। इसी बीच एक सुन्दर बलिष्ठ हरिण सरोवर की ओर मंद गति से आते हुए पुनः दिखाई पड़ा। व्याध ने उसे मारने की तैयारी ज्यों ही की कि इसी बीच वह विनय भरी वाणी में प्रार्थना करते हुए बोला—"सौम्य ! यदि मुझसे पहले इस सरोवर में आने वाली तीनों हरिणियों की

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

आपने हत्या की हो, तो लीजिए मुझे भी मार डालिए, क्योंकि तब मेरे जीने का कोई फल नहीं है। किंतु यदि उन्हें नहीं मारा है, तो मुझे भी न मारें, क्योंकि वे तीनों मेरी ही राह देख रही होंगी। मेरे मारे जाने पर उन तीन की प्रतिज्ञा भी पूरी न होगी, क्योंकि वे तीनों ही अपना-अपना भार मुझे सौंपकर आपके पास आने का वचन दे गई हैं।"

व्याध ने हरिण की सार्थक और मर्मभरी बातों का आदर किया। उसने हरिण को भी छोड़ दिया। इस बीच खूब सवेरा हो चुका था। भगवान् भास्कर की लाल किरणें सरोवर के भीतर तक प्रविष्ट होकर आकाश के साथ-साथ सरोवर और जंगल को प्रकाशमान करने लगी थीं। व्याध शिव-शिव जपता हुआ बेल के पेड़ से नीचे उतरा। उस समय उसका हृदय अत्यंत निर्मल और कोमल हो चुका था। भगवान् शिव की कृपा से उसका अज्ञान दूर हो चुका था। उसने प्रतिज्ञा की कि "आज से प्राणियों के वध-जैसा निर्मम कार्य वह कभी न करेगा। उसने मन में तय कर लिया कि यदि वे हरिणियाँ अपने वचन की रक्षा के लिये हमारे समीप आती भी हैं, तो मैं उन्हें नहीं मारूँगा।"

उधर हरिण सरोवर में पानी पीकर अपने आवास को वापस गया। उसने तीनों हरिणियों को अपने वचन की रक्षा करने के लिये व्याध के समीप जाने की याद दिलाई। वे तो पहले ही से तैयार बैठी थीं। अपने-अपने मनोरथों की पूर्ति कर वे व्याध के समीप पहुँच गई, किंतु तब तक वह व्याध कुछ दूसरा ही बन चुका था। उसने उनके सामने ही अपने धनुष-बाण सरोवर की अगाध जल-राशि में फेंक दिया और उनसे अपने आवास को वापस जाने की प्रार्थना की। महाशिवरात्रि के व्रत के संपूर्ण रीति से पालन होने के कारण आशुतोष

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

शंकरजी उस व्याध पर परम प्रसन्न थे, और अब तो उसकी निर्मल और करुणा-पूर्ण मनोवृत्ति से वह अत्यंत गद्गद हो उठे। उन्होंने व्याध को अपना लोक प्रदान किया और उसे लेने के लिये अपने एक गण को रथ के साथ भेजा। फिर तो शिवजी के उस पावन रथ पर व्याध के संग अपनी वचन की रक्षा करने वाले हरिण तथा हरिणियों को भी स्थान दिया गया। और वे सब के सब शिव-सायुज्य को प्राप्त हुए।

इस कथा के अनंतर शिवजी ने पार्वती जी से कहा कि जो प्राणी इस शिवरात्रि के व्रत का विधि-पूर्वक पालन करता है, वह अपने संपूर्ण पाप-कर्मों से मुक्ति पाकर मेरे धाम को प्राप्त करता है।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

२६. होलिकोत्सव

हिंदुओं के विशिष्ट ४ त्यौहारों में होली का प्रमुख स्थान है। वास्तव में यह राग-रंग का त्यौहार है। बड़े-छोटे, अमीर गरीब, छूत-अछूत, ऊँच-नीच सभी इसे सउल्लास मनाते आए हैं व मना रहे हैं। इसकी-परम्परा विशेषता द्वापर-काल से चली है जब भगवान् श्रीकृष्ण ने प्रथम वार अनेक शरीर धारण कर गोपिकाओं व गोप बालकों के साथ खेल कर उनके उभरे हुये उमंगों को शांत किया था। इसका दूसरा रूप भी है, जिसे हम होलिका-दहन कहते हैं। रंग खेलने के पहले दिन होली जलाई जाती है। इसका सूत्रपात म्लेच्छराज हिरण्यकशिप की बहिन होलिका से है। वर-प्राप्त होलिका का भक्त प्रह्लाद के साथ अग्नि-प्रवेश, होलिका का भस्म होना और प्रह्लाद का जीवित रहना एक महत्त्व-पूर्ण घटना की याद दिलाता है।

फाल्गुन की पूर्णमासी को यह जलाई और चैत्र कृष्ण परेवा को खेली जाती है। आदि काल से यह बड़े ऊँचे स्तर पर मनाई जाती रही है, किन्तु दुर्भाग्य से इसमें कुछ दोष आ गये हैं जो मानव-समाज को अमान्य हैं। निम्न श्रेणी के कतिपय व्यक्त इस अवसर पर दुर्व्यसनों के शिकार हो जाते हैं। उनकी धारणा है, कि होली के इस अवसर पर इसकी छूट है, यद्यपि हमारे शास्त्रों में ऐसा कोई विधान नहीं है। ज्यों ज्यों यह गलत धारणा बनती जाती है, त्यों-त्यों इस पुण्य-पर्व में गंदगी अधिक मात्रा में प्रवेश करती जा रही है। यदि यही गति रही, तो कालांतर में यह पर्व निकृष्ट व्यक्तियों तक ही सीमित होकर रह जायगा। यह सब होते हुए भी हिंदू-समाज में इस त्यौहार के प्रति बड़ा आदर का भाव है। महीनों पूर्व से ही इसकी प्रतीक्षा करते हैं। गाँवों में इसे अधिक मान्यता प्राप्त है। कई

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

दिन पूर्व से उमंग के साथ होली गाने-बजाने में लग जाते हैं। वर्ण-व्यवस्था के अनुसार हमारे त्यौहारों का भी वर्गीकरण किया गया है। जैसे रक्षाबंधन ब्राह्मणों का, विजया दशमी क्षत्रियों का, दीपावली वैश्यों का तथा होली शूद्रों का त्यौहार कहा गया है। सम्भवतः कीचड़ उछालने और परस्पर अश्लील व्यंग्य और गाली-गलौज के कारण ही ऐसा कहा गया हो।

वसन्तागमन जिसे हम काम-महोत्सव की संज्ञा दे सकते हैं, जन-जन में कामोद्दीपन होता है और वे इस मद में अपना मानसिक संतुलन खो बैठते हैं। मानव प्रवृत्तियाँ खोकर पशु-प्रवृत्ति प्रवेश करती है, जिसका प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से इस अवसर पर दिखाई पड़ता है।

होलिकोत्सव में सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें सबका समान रूप से मनोरंजन होता है। इस विचित्र त्यौहार में वर्णाश्रम धर्म अथवा मर्यादा की सीमा निर्धारित नहीं है। धर्मशास्त्रों में निहित व्यवस्था के अनुसार इस अवसर पर ब्राह्मण और अछूत खुले हृदय से मिल सकते हैं। किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं रहता। इस मिलन से बहुधा देखा गया है कि शत्रु-मित्र भी एक हो जाते हैं, आपसी भेद-भाव भुलाकर समान स्तर पर गले मिलते हैं। यदि इसमें जो अपवाद अप्रत्यक्ष रूप से प्रवेश कर गए हैं, हट जायँ, तो इससे बढ़कर कोई हिंदू त्यौहार नहीं हो सकता ; क्योंकि यह भेद-भाव-मुक्त अपूर्व मिलन का सर्वश्रेष्ठ अवसर प्रदान करता है।

विधि

होलिका-दहन के निमित्त वसंत पंचमी के दिन किसी निर्दिष्ट स्थान पर किसी वृक्ष की जो डाल गाड़ी जाती है, उसीके चारो ओर होली जलने के दिन लकड़ी, झाड़-झंखाड़,

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

गोवर के कंडे टूटी फूटी लकड़ी की वस्तुएँ एकत्र की जाती हैं। प्रदोष - व्यापिनी पूर्णिमा को यदि भद्रा का योग हो, तो उसके बीत जाने के २ घड़ी बाद होलिका-दहन किया जाता है। किंतु इसमें पंडितों का आपस में मतभेद है। पंचागों में इसका ठीक समय दिया रहता है। अतः इसे देखकर ही यह कार्य सम्पन्न करना चाहिए। कहते हैं गलत समय होलिका-दहन से राष्ट्र-विप्लव, नगर व गाँवों में अशांति आदि होने की संभावना बढ़ जाती है। सौभाग्यवती स्त्रियाँ सूर्यास्त से पूर्व होलिका-पूजन करती हैं। एक थाली में कुछ द्रव्य-हल्दी, अक्षत, रोली, गोलागिरी, ताम्बूल, सुपारी, गेहूँ की बाली, हल्दी की गाँठ और चर्खे का कता सूत ले जाती हैं। इससे विधिवत् पूजनोपरान्त होलिका की पाँच परिक्रमा करती हैं। परिक्रमा करते समय नीचे दिये हुए मंत्र का जाप अवश्य करे—

आसृक्याभयसंत्रस्तैः कृता त्वं होलि बालिशैः।
अतस्त्वां पूजयिष्यामि भूते भूतिप्रदा भव॥

कथा

होलिका हिरण्यकशिपु की बहिन थी। दैत्यराज हिरण्यकशिपु देवताओं का परम शत्रु था। जब उसे ज्ञात हुआ कि पुरोहितों के षड्यन्त्र से उसका पुत्र प्रह्लाद विष्णु का भक्त बन रहा है और उसके जीवन में विष्णु रम गए हैं, तो उसने उसे 'गुमराह' होने से बचाने के अनेक उपाय किए। समझाया-बुझाया और भर्त्सना भी की, किंतु कोई लाभ नहीं हुआ। हिरण्यकशिपु ने प्रह्लाद का जीवन समाप्त कर देने की आज्ञा दे दी; क्योंकि प्रह्लाद के जीवन में 'सुधार' होने की कोई आशा नहीं रह गई थी। अपने बधिकों को उसने प्रह्लाद को मार

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

डालने की आज्ञा दी, किंतु उन्हें सफलता नहीं मिली। निराश होकर उसने अपनी बहिन होलिका को प्रह्लाद को गोदी में लेकर जीवित जला देने की आज्ञा दी। होलिका को यह वरदान था कि अग्नि में वह जल नहीं सकती। होलिका ने अपने भाई के भय से आज्ञा शिरोधार्य की। वह प्रह्लाद को लेकर अपनी भुजाओं में कसकर बैठ गई। उसके ऊपर से काष्ठ के मोटे-मोटे टुकड़े डाल दिए गए और फिर आग लगा दी गई। किंतु विधाता को प्रह्लाद के द्वारा कुछ दूसरा ही काम कराना था। प्रह्लाद का बाल भी बाँका नहीं हुआ, उल्टे होलिका ही जल मरी। वह अग्नि की ज्वाला में जलते हुए अपने को बचाने के लिए चिल्लाने लगी, किंतु दैत्यों ने उसे अनसुनी कर दिया, क्योंकि वह अग्नि की भयंकर लपटों में अनेक बार घुसकर अक्षत रह चुकी थी। आग के बुझ जाने पर प्रह्लाद दहकते हुए स्वर्ण की भाँति अतिशय देदीप्यमान होकर 'हरि-हरि' का उच्चारण करते हुए बाहर निकल आए, किंतु क्रूर होलिका ने जो दुष्कर्म किया था, उसे उसका कुफल भोगना पड़ा, अग्नि ने उसकी हड्डियों तक को भस्म कर डाला। इसी की स्मृति में प्रति वर्ष होलिका के पुतले का दहन किया जाता है और उस अवसर पर कुवाच्य गाली-गलौज भी दी जाती है। क्योंकि नीचों के लिए सज्जनों के मुख से कुवाच्य निकल ही पड़ता है। फलतः होली के साथ गाली-गलौज की यह कुप्रथा होली का एक अंग बन गई। होली के बाद रंग एवं बच्चों के खेल-कूद की परम्परा भी उसी समय से प्रचलित हुई है, क्योंकि एक तेजस्वी बालक प्रह्लाद को विजय उनके लिए आनंद का अविरल और अजस्र स्रोत थी। तभी से होली के इस वर्तमान रूप-रंग की प्रथा प्रचलित मालूम पड़ती है।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

३०. एकादशियों के व्रत

सनातन धर्मी हिंदुओं में एकादशी व्रत का बड़ा महत्त्व कहा गया है। इन व्रतों की पृष्ठ भूमि पर वैज्ञानिक पुट मिलती है। धार्मिक विधानों की रूप-रेखा परंपरागत स्वास्थ्य और रहन-सहन के आधार पर बनी है। कब किस समय व्रत रखना चाहिये, यह हमारे पूर्वज जो वास्तव में आज के वैज्ञानिकों से चिंतन में कम नहीं थे, धर्म का रूप देकर निर्णय कर चुके हैं। ये व्रत स्त्री-पुरुष समान रूप से मनाते हैं, किंतु स्त्रियाँ भावुक तथा धर्म-भीरु अधिक होती हैं, अतः उनमें इनका प्रचलन भी अधिक है। हिंदू-शास्त्रों में २६ एकादशी व्रतों का विधान है। हम उनमें से कुछ ही का विवरण दे रहे हैं, जो हिंदू-समाज में अधिकतर प्रचलित हैं।

१. उत्पन्ना एकादशी—मार्गशीर्ष की कृष्ण एकादशी को उत्पन्ना एकादशी कहते हैं। इसी तिथि को भगवान् विष्णु के शरीर से एकादशी का जन्म हुआ था। अतः इसी एकादशी से अन्य एकादशियों का व्रत प्रारंभ किया जाता है। गुजरात में इसी एकादशी के दिन वैतरिणी का व्रत रक्खा जाता है।

२. मोक्षदा एकादशी—मार्गशीर्ष की शुक्ल पक्ष में यह व्रत रक्खा जाता है। विधि-पूवक इसके पालन से अज्ञानता का नाश हो जाता है। यही वह तिथि थी, जब कुरुक्षेत्र के मैदान में भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को गीता का उपदेश दिया था, और अर्जुन निराहार थे। अतः इस दिन भगवान् श्रीकृष्ण और श्री व्यास की पूजा करनी चाहिए। गीता जयन्ती भी इसी दिन मनाई जाती है।

३. सफला एकादशी—पौष मास की कृष्णपक्ष को यह एकादशी पड़ती है। इसमें भगवान् विष्णु का नैवेद्य, केला,

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

बिजौरा, जंबीरा नारियल, अनार और पूंगीफल आदि से पूजन करना चाहिए और रात्रि में जागरण कर इसकी कथा सुने।

४. पुत्रदा एकादशी—पौष मास की शुक्ल पक्ष को यह व्रत अधिकतर वे स्त्रियाँ मनाती हैं, जो पुत्र की इच्छा रखती हैं। कहा जाता है, विधि-विधान से तथा लगन-पूर्वक इस व्रत के पालन से निश्चय पुत्र की प्राप्ति होती है।

५. विजया एकादशी—फाल्गुन मास की कृष्ण पक्ष को यह व्रत पड़ता है। इसके अनुष्ठान से सर्वत्र विजय मिलती है। श्रीरामचंद्रजी ने इसी के मनोयोग पूर्वक अनुष्ठान से लंका पर विजय प्राप्त की थी। अन्य अनुष्ठानों से इसकी विधि भी कुछ भिन्न है। दशमी के दिन सोना-चाँदी, ताँबा, या मिट्टी का कलश जल भर कर स्थापित करे और उस पर पंच पल्लव रक्खे। कलश के नीचे सातों अन्न रखकर ऊपर से जौ छींटकर फिर उस पर कलश रक्खे। तदुपरांत उस पर लक्ष्मी-नारायण की प्रतिमा की स्थापना करे और फिर स्नान कर विधि विधान से उनका पूजन करे। नैवेद्य लगाये और रात्रि-जागरण कर भगवत् कीर्तन करे। पूजन की समस्त वस्तुएँ प्रतिमा-सहित किसी कुलीन ब्राह्मण को दान कर दे।

६. कामदा अथवा फलदा एकादशी—चैत्र मास की शुक्ल पक्षे को यह पड़ती है। इसके व्रत रखनेवालों की सदा मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं और जीवन का वास्तविक आनंद मिलता है। कहा जाता है, इसके विधि पूर्वक अनुष्ठान से भाग्य भी पलटा खा जाता है और आशा के विपरीत इच्छित वस्तु अनायास प्राप्त हो जाती है।

७. मोहिनी एकादशी—वैशाख की शुक्ल पक्ष को व्रत का विधान है। इस व्रत से विद्यादान के समान फल प्राप्त होता है। इस व्रत का अनुष्ठान भगवान् रामचंद्र ने सीता को खोजने के

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

समय किया था। इसी प्रकार मुनि श्रेष्ठ कौंडिन्य तथा धर्मराज युधिष्ठिर ने इस व्रत के अनुष्ठान से सभी कष्टों से निवृत्ति पाई थी।

८. निर्जला एकादशी—जेष्ठ मास की शुक्ल पक्ष को इस व्रत का अनुष्ठान किया जाता है। यदि वर्ष भर के किसी भी व्रत को न रख कर केवल यही व्रत विधि पूर्वक किया जाय, तो सभी एकादशियों का सम्मिलित पुण्य प्राप्त होता है। इस एकादशी को निर्जला और निराहार रहकर व्रत सम्पन्न किया जाता है। इस व्रत के अनुष्ठान से दीर्घायु, आरोग्य तथा धन की प्राप्ति होती है। जिस दिन यह व्रत रक्खा जाय, आचमन के अतिरिक्त जल किसी भी रूप में ग्रहण न करना चाहिए। इस दिन पूजनोपरान्त जल-पूर्ण कलश, छाता, जूता, फल आदि दान किया जाता है। इस व्रत का सूत्रपात महाभारत काल से हुआ है। कहा जाता है कि पांडव बन्धुओं में तिसरे भीम बड़े पेटू थे। उनका ध्यान सदैव भोजन में लगा रहता था और अन्य उपयोगी काय छूट जाते थे। इससे निवृत्ति पाने के लिये उन्होंने व्यासजी से उपाय पूछा और उन्होंने इस व्रत का अनुष्ठान बताया, जिससे उन्हें सदैव भोजन चिंतन से छुटकारा प्राप्त हुआ और अधिक भोजन में जो व्याधियाँ उनमें प्रवेश कर गई थीं वे दूर हो गई।

९. योगिनी एकादशी—आषाढ़ कृष्ण की इस एकादशी को योगिनी एकादशी कहते हैं। इस व्रत से कुष्ठ आदि भयंकर रोग दूर होते हैं।

१०. कामदा एकादशी—श्रावण कृष्ण एकादशी को कामदा एकादशी कहते हैं। इस दिन फलाहार व्रत किया जाता है। इसमें भगवान् श्रीकृष्ण का पूजन किया जाता है। रात्रि

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

में घी का दीपक जलाकर कथा कीर्तन सहित रात्रि-जागरण का विशेष महत्व है।

११. अजा एकादशी—भाद्रपद के कृष्ण पक्ष में यह व्रत पड़ता है। इस व्रत के करने से मनुष्य पुनर्जन्म से मुक्ति प्राप्त करता है। सतयुग में राजा हरिश्चंद्र को राजपाट, स्त्री-पुत्र से अलग हो जाने पर जब बड़ा कष्ट हुआ तो उन्होंने उसके निवारण का उपाय जब महर्षि गौतम से पूँछा तो उन्होंने इसी व्रत का अनुष्ठान बताया इसके करने से राजपाट, स्त्री पुत्र, सब उन्हें वापस मिले और अंत में मोक्ष प्राप्त किया।

१२. इन्दिरा एकादशी—आश्विन मास के कृष्ण पक्ष में इस व्रत का अनुष्ठान है। चूँकि यह पितृपक्ष के दिनों में ही पड़ती है, इसलिये इस समय व्रत आदि रखने से पितरों को सद्गति प्राप्त होती है और व्रती का सभी प्रकार कल्याण होता है। कहते हैं कि प्राचीन काल में इन्द्रसेन नामक परम प्रतापी राजा था, जो शिव का परम भक्त था। एक बार नारद मुनि घूमते हुए उनके दरबार में पहुँचे और उन्हें बताया कि उनके पिता यमलोक में बड़े कष्ट में हैं। मुनि से इसके निराकरण का उपाय पूँछे जाने पर उन्होंने इसी व्रत का अनुष्ठान बताया जिसके विधि-पूर्वक किये जाने पर उनके पिता को यम-यातना से मुक्ति मिली।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

३१. प्रदोष व्रत

प्रदोष व्रत महीने में दो बार किया जाता है। यह प्रत्येक त्रयोदशी को होता है। दिन-भर व्रत रखकर सायंकाल शिव-पूजन के पश्चात् भोजन किया जाता है। जिस प्रकार एकादशी भगवान् विष्णु का व्रत है उसी प्रकार यह शंकरजी का व्रत माना जाता है। यह व्रत विशेष रूप से पुत्र की कामना से किया जाता है। कृष्णपक्ष त्रयोदशी की सोमवार और शुक्लपक्ष त्रयोदशी की शनिवार को इस व्रत के अनुष्ठान से विशेष फल मिलता है। इस व्रत को स्त्री और पुरुष दोनों ही करते हैं।

विधि

प्रातःकाल नित्य कर्म से निवृत्त होकर स्नान कर व्रत का संकल्प करे। दिन-भर उपवास कर सायंकाल पार्थिव शिव मंदिर में पूजन करने के उपरांत भोजन करे। उसके बाद पुनः रात को भोजन वर्जित है। रात्रि में शिव-कीर्तन व शिव-कथा का विशेष महत्त्व है। २१ वर्ष तक निर्बाध रूप से यह व्रत रक्खा जाता है। बीच में टूट जाने पर इसका उद्यापन आवश्यक है। इस संबंध में निम्न कथा अधिक कही व सुनी जाती है

कथा

प्राचीन काल में एक ब्राह्मणी पति की मृत्यु के बाद गरीबी के कारण भीख माँग कर उदर-पालन करती थी। उसके एक पुत्र भी था। दोनो दिन-भर भिक्षा को निकल जाते और संध्या-समय अपनी कुटी पर वापस आते। एक दिन भिक्षाटन को निकले, मार्ग में उन्हें एक छोटा सुंदर बालक मिला, जो निरुद्देश्य घूम रहा था। पूछने पर उसने बताया कि वह एक राज-

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

पुत्र है। युद्ध में पिता के मारे जाने और स्वजनों के भागते समय साथ छूट जाने से अकेला रह गया है। ब्राह्मणी उस बालक को अपने घर ले आई, और यत्न-पूर्वक अपने पुत्र के समान ही उसका लालन-पालन करने लगी। कुछ समय बीतने पर ब्राह्मणी दोनो पुत्रों सहित शांडिल्य ऋषि के आश्रम में पहुँची। संयोग से उस समय प्रदोष में शिव-पूजन हो रहा था। ब्राह्मणी ने भी ऋषि से इसकी विधि पूँछी। घर आकर पुत्रों-सहित विधि-पूर्वक इस व्रत का पालन करने लगी।

लगभग ४ मास व्यतीत होने पर एक दिन ब्राह्मणी-पुत्र घूमता हुआ गंगा-तट पर चला गया, वहाँ उसे स्वर्ण और चाँदी से भरा कलश मिला। वह उसे घर उठा लाया। इस धन से ब्राह्मणी का सब दारिद्र्य दूर हो गया। और वे सब सुख-पूर्वक जीवन व्यतीत करने लगे। इसी प्रकार और समय बीतने पर दोनो बालक जो अब यौवनावस्था को प्राप्त थे, घूमते हुए जंगल की ओर निकल गए। वहाँ उन्हें कल्लोल करती हुई कुछ अप्सरा दिखाई दीं। यों तो सभी सुंदर थीं, किन्तु उनमें से एक विशेष सुंदरी थी। वह गंधर्व-राज की कन्या थी और उसका नाम अंशुमती था। अंशुमती और राजपुत्र की चार आँखें होने पर दोनो एक दूसरे पर आसक्त हो गये। अंशुमती की सखियों द्वारा यह भेद खुलने पर गंधर्वराज ने राजकुमार को सुपात्र जानकर अपनी कन्या का विवाह उसके साथ कर दिया और दहेज में विपुल धन व वस्त्र आदि देकर उसे सभी प्रकार सम्मानित किया।

समय पाकर राजपुत्र ने अपने राज्य के बिखरे हुए सैनिकों और सामंतों को एकत्रित किया। पुनः अपने श्वसुर गंधर्वराज से सैन्य सहायता लेकर अपने पिता के राज्य, 'पर जो अब शत्रु के प्रभुत्व में था, धावा बोल दिया। शंकरजी की अनुकम्पा से उसने शीघ्र ही अपने राज्य को शत्रु-विहीन कर दिया और

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

राज्य की बागडोर अपने हाथों में ले ली। राजकाज सम्हालते ही उसे अपनी माता तुल्य ब्राह्मणी की याद आई। उसने तुरंत उसे ससम्मान अपने महल में बुला लिया और जीवन पर्यंत माता के समान उसका आदर करता रहा। ब्राह्मणी के पुत्र को जो उसका बाल बंधु व सखा रहा था, अपना प्रधान-मंत्री नियुक्त किया। इस प्रकार प्रदोष व्रत करने से उन सबका सभी प्रकार कल्याण हुआ।

---

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

३२. सातो वारों के व्रत

रवि, सोम, मंगल बुद्ध, वृहस्पति, शुक्र तथा शनिवार इन सातों वारों के भी विविध विधान हमारे प्राचीन ग्रंथों में मिलते हैं। एक वार २४ घंटे का माना गया है। आकाश मंडल में उन सातों वारों की विशेष परिधि है और ये प्रत्यक्ष ग्रहों के रूप में प्रतिष्ठित हैं। इन सब में सूर्य सबसे तेजस्वी और महान् है। वास्तव में सूर्य की स्थिति पर ही भूमंडल का अस्तित्व निर्भर है। अन्य छः ग्रहों का कोई अपना प्रकाश नहीं है, वे सभी सूर्य के प्रकाश से ही प्रदीप्त रहते हैं। मानव-जीवन पर इन ग्रहों का भी प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। अतः उनके निमित्त जप, दान, प्रतिष्ठा, पूजा और व्रत आदि के विधान हमारे पूर्वजों ने बनाए हैं। रवि, सोम, मंगल तथा शनिवार के व्रत विशेष प्रचलित हैं; किंतु बुध, वृहस्पति तथा शुक्रवार के भी व्रत शास्त्रों में हैं। नीचे रविवार के क्रम से सातों वारों के व्रतों का विधान दिया जा रहा है।

१. रविवार का व्रत—रविवार का व्रत स्वास्थ्य तथा दीर्घायु के लिये किया जाता है। विशेषकर चर्मरोग, कुष्ठ अथवा चिररोग में इसका प्रत्यक्ष फल दिखाई पड़ता है। इसका आरंभ वैशाख, मार्गशीर्ष तथा माघ महीने से करना चाहिए। इन महीनों में से किसी को भी प्रथम रविवार जब पड़े, तो निम्नलिखित विधि से आरंभ करना चाहिए—

प्रातःकाल उठकर नित्यकर्म से निवृत्त हो किसी पवित्र तीर्थ अथवा सरोवर में स्नान करे और व्रत का संकल्प करे। अपनी शक्ति के अनुसार स्वर्ण, चाँदी अथवा ताँबे की सूर्य-प्रतिमा बनवाकर गंध - पुष्पादि से उसका पूजन करे और मध्याह्न में बिना नमक का भोजन करे। कहीं-कहीं सायंकाल

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

मैं सूर्यास्त से पूर्व भोजन करते हैं। किंतु इसके बाद फिर रात्रि में भोजन न करना चाहिए। सूर्य पुराण अथवा सूर्य-नारायण का कोई स्तोत्र भक्ति-समेत पाठ करना चाहिए। कम से कम एक वर्ष तक तो अवश्य ही इसे करना चाहिए।

किन्हीं ग्रंथों में इसकी विधि इस प्रकार है--प्रातःकाल नदी या सरोवर में स्नान कर देवताओं तथा पितरों का तर्पण कर पवित्र भूमि पर बारह दलों का कमल बनाये और वैसा ही एक कमल लाल चंदन से तांबे के पात्र पर बनाये। फिर उसे भूमि पर बने कमल पर रखकर भगवान् सूर्यनारायण का पूजन करे। बारह महीनों में बारह नीचे लिखे सूर्यों के नाम स्मरण करते हुए पूजन करे। इन सूर्यों के लिये अर्घ्य, नैवेद्य और प्राशन के अलग-अलग नीचे लिखे विधान हैं—

महीना	सूर्य के नाम	अर्घ्य	नवैद्य	प्राशन
चैत्र	भानु	अनार	मालपुआ	३ छटाँक दूध
वैशाख	तपन	दाख	घी, उड़द	गाय का गोबर
ज्येष्ठ	इन्द्र	आम	दही, भात	३ अंजुली जल
आषाढ़	रवि	खीरा	खीरा	३ मिर्च
श्रावण	गभस्ति	त्रपुसीफल	सत्तू, पूड़ी	३ मुट्ठी सत्तू
भाद्रपद	यम	कुम्हड़ा	घी, चावल	गोमूत्र
आश्विन	हिरण्यरेता	अनार	शक्कर	३ मुट्ठी शक्कर
कार्त्तिक	दिवाकर	केला	खीर	३ मुट्ठी खीर
मार्गशीर्ष	मित्र	नारियल	घी, गुड़ मिश्रित चावल	३ तुलसी दल
पौष	विष्णु	बिजौरा	तिल चावल	३ छटाँक घी
माघ	वरुण	केला	केला	३ मुट्ठी तिल
फाल्गुन	सूर्य	जंभीरी	दही	३ छटाँक दही

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

इस व्रत का विधान निराहार रहकर एक वर्ष तक समस्त रविवारों को करना चाहिए। अगर निराहार न रह सके, तो नमक को छोड़ दे और केवल एक समय भोजन करें।

भाद्रपद मास में हरतालिका के बाद जो रविवार आता है, उसे बड़ा रविवार मानते हैं। इस पुण्य तिथि को भगवान् सूर्य-नारायण का जन्म मानते हैं। इस दिन व्रत रख भगवान् सूर्य को अर्घ्य दे पूजन-पाठ किया जाता है, फिर कुछ दान करके सूर्यास्त के पूर्व विना नमक का भोजन एक बार किया जाता है। यह व्रत प्रायः सभी हिंदू करते हैं।

इस व्रत में तेल नहीं लगाना चाहिए और न क्षौर तथा दिन में शयन ही करना चाहिए। इसकी कथा संक्षेप में इस प्रकार है:--

कथा

भगवान् श्रीकृष्ण ने जब मथुरा छोड़कर द्वारकापुरी का निर्माण करवाया, तो महर्षि दुर्वासा को उसे देखने की इच्छा हुई। वह द्वारकापुरी पहुँचे। भगवान् श्रीकृष्ण को उनके शुभागमन का संदेश मिला, तो वह स्वयं उनके स्वागत के लिये नगरी से बाहर आए और उन्हें अपने भवन में ले जाकर अर्घ्य-पाद्य आदि से विधिवत् आगत-स्वागत किया। भोजनादि से सत्कृत कर दोनो जन एकांत में वार्तालाप करने लगे। इसी बीच भगवान् श्रीकृष्ण की पत्नी जाम्बवन्ती का पुत्र साम्ब वहाँ आया और वह मुनि की विचित्र वेश-भूषा देखकर उनका उपहास करने लगा। दुर्वासा सहज क्रोधी थे। साम्ब की इस धृष्टता पर उन्हें क्रोध आ गया। उन्होंने क्रुद्ध होकर उसे मन ही मन शाप दे दिया—रे दुर्बुद्धि बालक! मेरा उपहास करने के कारण तुझे कुष्ठ हो जायगा।' यह कहकर वह राजभवन से

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

चुपचाप उठकर बाहर चले आए।

भगवान् श्रीकृष्ण को इस शाप का पता न चला, क्योंकि दुर्वासा ने अपने मन में ही यह शाप दिया था। द्वारकापुरी से बाहर आने पर दुर्वासा की भेंट देवर्षि नारदजी से हुई, जो भगवान् श्रीकृष्ण के पास द्वारका जा रहे थे। कुशल-क्षेम के अनंतर दुर्वासा ने साम्ब को शाप देने की बात नारदजी से कह दी। द्वारका पहुँचकर नारदजी ने भगवान् श्रीकृष्ण से यह बात बताई, तो वह बहुत चिंतित हुए और उन्होंने तत्काल दुर्वासाजी को प्रसन्नकर उन्हीं से इसकी शांति का उपाय पूछने का निश्चय किया। द्वारकापुरी से बहुत दूर जाने पर उनकी भेंट दुर्वासा से हुई। भगवान् ने स्वयं उनसे बड़ी अभ्यर्थना और क्षमा याचना की तथा अबोध बालक के शाप को दूर करने का उपाय पूछा।

दुर्वासा प्रसन्न भी शीघ्र होते थे। भगवान् श्रीकृष्ण के अनुनय-विनय से प्रसन्न होकर साम्ब को रविवार - व्रत करने का आदेश बताते हुये कहा कि एक वर्ष तक इस व्रत को करने से साम्ब का कुष्ट रोग अवश्य दूर हो जायगा। साम्ब ने वैसा ही किया और इसी से उसका कुष्ट जड़-मूल से दूर हो गया।

वस्तुतः कुष्ठ रोग रक्त की खराबी से होता है। रक्त को दूषित करने में अनियमित आहार-विहार एवं नमक का बड़ा हाथ होता है। शरीर में जब क्षार द्रव्य अधिक हो जाता है तो चमड़ी में विकार उत्पन्न हो जाता है। रविवार वर्ष में ५२ पड़ते हैं। ५२ दिनों तक नियमित उपचारों के कारण भी बहुत कुछ यह रोग शांत हो जाता है, जब कि भगवान् सूर्यनारायण की आराधना एवं स्तुति का भी प्राणी पर अमोघ मानसिक प्रभाव होता है। रविवार का व्रत बहुत लोकप्रिय है और स्वास्थ्य की दृष्टि से भी इसका विशेष महत्त्व है।

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

२. सोमवार का व्रत—सोमवार का व्रत शंकर-पार्वती को प्रसन्न करने के लिये किया जाता है। इस व्रत का उद्देश्य दांपत्य-सुख की प्राप्ति तथा पति-पुत्रादि के सुख की कामना है। बहुधा स्त्रियाँ ही व्रत रखती हैं।

विधि

इस व्रत का आरंभ चैत्र, वैशाख, श्रावण, कार्त्तिक अथवा मार्गशीर्ष के प्रथम सोमवार से करना चाहिए। विशेषकर श्रावण मास में इसका अधिक महत्त्व है। प्रातःकाल उठकर नित्यकर्म से निवृत्त होकर स्नानादि के अनंतर इसका संकल्प ग्रहण करे और शिव-पार्वती की प्रतिमा का विधिवत् पूजन कर उनकी स्तुति करे। फिर किसी उद्यान में जाकर स्वयं एक बार भोजन करे। इस व्रत का चौदह वर्ष तक पालन करने के उपरांत उद्यापन करना चाहिए। इससे पति-पुत्रादि पर कष्ट नहीं आता, यदि आया भी, तो उसका निवारण भी शीघ्र होता है।

३. मंगलवार का व्रत—मंगल ग्रह क्रूर तथा निष्ठुर स्वभाव के बताये जाते हैं। उनकी प्रसन्नता तथा क्रोध-शांति के लिये इसका व्रत किया जाता है। इस दिन हनुमान् जी का मंदिर में दर्शन और प्रसाद चढ़ाने का बड़ा महत्त्व है। वास्तव में यह दिन उन्हीं के निमित्त है।

प्रातःकाल उठकर नित्यकर्म से निवृत्त होकर मंगल का व्रत रक्खे और मंगल की मूर्ति का लाल फूलों से पूजन करे, लाल वस्त्र तथा लाल चंदन चढ़ाए। गुड़, घी, गेहूँ, के बने पदार्थों का नैवेद्य लगाए तथा एक बार दिन में भोजन करे। इस प्रकार छः मंगलवार का व्रत रख लेने के बाद सातवें मंगल को मंगल की स्वर्ण निर्मित प्रतिमा का पूजन करे। दो लाल वस्त्र चढ़ाए तथा लाल चंदन का लेप करे। धूप, पुष्प, अक्षत, दीपक

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

चढ़ाए। घी, गुड़ और तिलों से १०८ मंगल के मंत्र अथवा नाम से हवन करे। पूजन के पश्चात् ब्राह्मण को भोजन कराकर उक्त मूर्ति दक्षिणा समेत किसी सुपात्र को दान कर दे। मंगलवार को यदि स्वाती नक्षत्र हो, तो अत्युतम होता है।

कहीं-कहीं इक्कीस मंगल का व्रत रखने का भी विधान है। इक्कीस मंगल का व्रत विशेष फलदायी है। इससे मंगल-ग्रह की शांति होती है और दुःख-दारिद्र्य के विनाश के साथ सुख समृद्धि की प्राप्ति होती है। मंगलवार का व्रत करने से पुत्र-शोक नहीं होता।

४. बुधवार का व्रत—बुधवार का व्रत ग्रह की शांति तथा ज्ञान वर्धन के लिये किया जाता है। श्वेत पुष्प, वस्त्र तथा चंदनादि से बुध की पूजा करनी चाहिए इसमें भी केवल एक बार ही दिन में भोजन करना चाहिए। जो कुछ भोजन करे उसी प्रकार की वस्तु दान में दे—यही विशेषता है कम से कम सात बुधवार का व्रत रखना चाहिए। बुधवार को विशाखा नक्षत्र का योग व्रत के लिये विशेष लाभदायक है।

बृहस्पतिवार का व्रत—बृहस्पति देवताओं के गुरू हैं। गुरु-पद पर आसीन व्यक्ति की योग्यता प्रमाणित है अतः विद्या-बुद्धि की प्राप्ति के लिये यह व्रत किया जाता है। इस दिन पीली खाद्य वस्तुओं का केवल एक बार भोजन करना चाहिए और वैसे ही वस्तु का दान भी करना चाहिए। बृहस्पति के लिये पीले पुष्प, पीले वस्त्र तथा पीले चंदन का प्रयोग करना चाहिए। छाता, जूता तथा खड़ाऊँ का दान विशेष फलदायी है। बृहस्पति का व्रत भी लगातार सात दिन करके समाप्त किया जा सकता है। गुरुवार को यदि अनुराधा नक्षत्र हो तो व्रत के लिए अत्युत्तम योग होता है।

शुक्रवार का व्रत—शुक्र ग्रह के दोष की शांति तथा सुख-

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0
संपदा की प्राप्ति के लिये शुक्रवार का व्रत रक्खा जाता है। इस ग्रह का पूजन श्वेत पुष्प, वस्त्र तथा चंदनादि से किया तथा केवल एक समय ही रात्रि में भोजन किया जाता है। पूजा के बाद ब्राह्मण खीर का भोजन कराकर तब स्वयं भोजन करे। कम से कम सात बार इसके करने की अनुष्ठान है। शुक्रवार को यदि ज्येष्ठा नक्षत्र का योग हो, तो व्रत का विशेष फल होता है।

शनिवार का व्रत—सब देवताओं में शनि बड़े क्रोधी स्वभाव के हैं। इनकी दृष्टि बहुधा अकल्याणकारी हुआ करती हैं। राहु-केतु छल से अमृत-पान किए हुए दुष्ट दानव इनके सहयोगी हैं। शनि यद्यपि क्रोधी स्वभाव के हैं, किंतु शंकर की भाँति प्रसन्न भी जल्दी हो जाते हैं, और अपने भक्तों को सभी विघ्न बाधाओं से मुक्ति दिला देते हैं। इस व्रत का आरंभ श्रावण मास के शुक्ल पक्ष में पड़ने वाले प्रथम शनिवार से करना चाहिए। शंकर और शनि में प्रगाढ़ मैत्री है, अतः शंकर जी की प्रसन्नता के लिये भी बहुधा लोग इस व्रत को करते हैं।

प्रातःकाल उठकर नित्य कर्म से निवृत्त होकर स्नान के अनंतर व्रत का संकल्प ले। फिर शनि, राहु और केतु की लोहे अथवा सीसे की मूर्तियाँ बनवाकर उसका विधिवत पूजन करे। काले अक्षत, काले वस्त्र, काले पुष्प तथा काले चंदन का प्रयोग करे। पूजन किसी शमी वृक्ष अथवा पीपल वृक्ष के नीचे करे तो अति उत्तम। पूजन के वृक्ष की सात बार प्रदक्षिणा करके वृक्ष में कच्चा सूत लपेटे तथा शनि की प्रार्थना करे। लोहे के कटोरे में कड़ुवा तेल भर कर, काले तिल तथा अन्य काली वस्तुओं का दान करे भोजन भी किसी काले रंग का करे। जैसे काला जौ, काला उड़ काला तिल आदि। यदि सामर्थ्य हो तो किसी पात्र को काले बछड़ेवाली काली गाय का दान करे।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

३३. सत्यनारायण-व्रत

इस व्रत-कथा का उद्गम क्योंकर, कब और किन परिस्थितियों में हुआ, इसका पता ठीक से नहीं चलता, किंतु यह निश्चित है कि उत्तर भारत में २५० वर्ष से भी अधिक समय से यह अपना पूर्ण आधिपत्य जमाए है। ज्यों ज्यों समय बीतता जाता है, इसकी लोक-प्रियता बढ़ती जाती है। गाँवों में यह अधिक लोक-प्रिय है। ग्राम-वासियों की इसमें अधिक निष्ठा है। लगभग सभी मंगल-कार्यों जैसे मूँडन, वर्षगाँठ आदि अवसरों पर व्रत और कथा का आयोजन होता है। पुराण, रामायण, महाभारत आदि कथाओं के स्थान पर अब भी सत्यनारायण की कथा अधिकतर लोग कराते हैं, कारण यह अत्यंत रोचक अल्प समय और आयोजन में ही सम्पन्न हो जाती हैं। सनातनी हिंदुओं में ऐसी धारणा है कि इस व्रत कथा से लक्ष्मी और नारायण दोनों ही शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं। इसमें सत्य का महत्व दिखाया गया है जिससे प्रमाणित होता है कि सत्य का अवलम्ब प्राणी को सांसारिक क्लेश और बाधाओं से मुक्त रखता है। यह कथा जब भी इच्छा हो कराई जा सकती है। किंतु एकादशी अथवा पूर्णिमा को इसका अधिक महत्व है।

विधि

प्रातःकाल उठकर नित्य कर्म से निवृत्त होकर शुद्ध शीतल जल से स्नान करे और व्रत का संकल्प ले। दिन-भर निर्जल व्रत रक्खे और किसी योग्य पंडित से पूजनोपरांत कथा सुने। पूजन का स्थान धुला हुआ साफ़ सुथरा होना चाहिए। चौक पुराकर केले के खंभों द्वारा सजाए गए सिंहासन पर शालग्राम

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

की मूर्ति स्थापित करे। फिर कलश की स्थापना कर नवग्रह का पूजन करे। प्रसाद के लिये दोनों में आटे की पंजीरी, मिष्ठान्न, ऋतुओं के फल और बताशे रक्खे। शालग्राम की मूर्ति को पंचामृत में स्नान करा कर पूजन करे और नीचे दी हुई कथा सुने। अंत में प्रसाद और पंचामृत उपस्थित श्रोताओं में वितरण करें। कहते हैं, इस प्रसाद को स्वीकार न करने अथवा उपेक्षा करने से शारीरिक और आर्थिक कष्ट दोनो ही अनायास आ पड़ते हैं।

कथा

प्राचीन काल में उल्कामुख नामक एक परम सत्यवादी राजा ने भद्रशीला नामक नदी के किनारे इस व्रत और कथा का आयोजन कर रक्खा था। उसी अवसर पर वहाँ एक व्यापारी वणिक की नाव आकर लगी। वणिक भी राजा की पूजा में शामिल हुआ और उसने बड़ी उत्सुकता से राजा से व्रत का विधान और महत्व पूछा। राजा के मुख से इस व्रत की मनोवांछित फल देने की महिमा तथा विधि सुनकर वणिक जब अपने घर वापस आया, तो स्त्री से सलाह करके उसने संकल्प लिया कि जब उन्हें कोई संतान होगी, तो वे भी सत्यनारायण का व्रत रक्खेंगे और कथा सुनेंगे। वणिक की स्त्री का नाम लीलावती था। थोड़े दिनों के बाद उसे एक परम सुंदरी कन्या हुई, जिसका नाम कलावती रक्खा गया। लीलावती ने जब पति को सत्यनारायण - पूजन तथा व्रत के संकल्प का स्मरण दिलाया, तो उसने यह कहकर टाल दिया कि कन्या के विवाह के अवसर पर ही यह व्रत तथा पूजन किया जायगा। लीलावती चुप हो गई। कलावती शुक्लपक्ष के चंद्रमा की भाँति दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगी। बहुत जल्द ही वह विवाह योग्य हो

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

गई। वणिक ने उसका विवाह भी कर दिया, किंतु स्त्री के स्मरण दिलाने पर भी उस समय भी उसने सत्यनारायण भगवान् का पूजन नहीं किया। उसके इस आचरण पर भगवान् बहुत रुष्ट हुए और उसे दंडित करने की व्यवस्था की।

थोड़े दिनों बाद वणिक अपने दामाद के साथ रत्नसारपुर गया, जहाँ का राजा चन्द्रकेतु था। संयोग की बात, राजा के खज़ाने से रात को चोर बहुमूल्य रत्न तथा आभूषण चुरा कर ले भागे। जब राज कर्मचारियों ने उनका पीछा किया तो सब सामान वणिक के पड़ाव के पास फेंककर वे भाग गए। जब राजकर्मचारी वहाँ आए और उन्होंने वणिक के पड़ाव के पास सब चोरी का सामान पड़ा देखा तो इन्हीं को चोर समझ कर वे पकड़ ले गए। इन श्वशुर और दामाद ने बहुतेरी सफाई दी, किंतु किसी ने विश्वास नहीं किया। फलतः इनका अपना सब सामान भी राजा ने जब्त कर लिया और इन दोनों को कारागार में बंद करा दिया। इधर वणिक के घर में भी चोरी हुई और जो कुछ कीमती सामान था, वह सब चोर उठा ले गए और माँ-बेटी को भूखों मरने की नौबत आ गई।

एक दिन कन्या कलावती किसी देव-स्थान में किसी कार्य से गई थी, वहाँ सत्यनारायण का पूजन हो रहा था। उसने वहाँ भक्ति-पूर्वक कथा सुनी और प्रसाद लेकर घर आई। देर से घर आने के कारण माता ने कलावती को बहुत जब बुरा-भला कहना शुरू किया, तो उसने सत्यनारायण के पूजन की चर्चा कर उसका समाधान किया। माता शांत हो गई और उसे अपने पति के वचन की याद आई। दूसरे दिन उसने भी व्रत किया। सच्चे हृदय से अपने पति के अपराधों को भूल जाने की प्रार्थना की। इसका परिणाम यह हुआ कि उसी रात

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

राजा चंद्रकेतु को स्वप्न हुआ कि—'उन वणिकों को जो इस समय कारावास में हैं तुरंत उनकी धन-संपत्ति देकर छोड़ दो अन्यथा तुम्हारा सत्यानाश हो जायगा।' राजा ने सवेरा होते ही उन दोनों श्वशुर-दामाद को छोड़ दिया और जो कुछ उनकी धन-संपत्ति थी उसका दूना देकर उनसे क्षमा याचना भी की।

दोनो श्वशुर-दामाद परम प्रसन्न होकर सब संपत्ति नाव पर लादकर अपने नगर की ओर चल पड़े। भगवान् सत्य-नारायण ने एक बार फिर परीक्षा ली। एक दंडी का वेश धारण कर वे वणिक के पास आये और उससे पूछा कि 'इस नाव में क्या है ?' वणिक ने कहा—'इसमें लता पत्रादि हैं, और कुछ नहीं है ?' दंडी भगवान् ने कहा—'तुम्हारा कहना ठीक ही होगा।' यह कहकर वे लौट पड़े और नाव आगे चलने लगी। थोड़ी दूर जाने पर वणिक ने देखा तो सचमुच उसकी नाव में लता-पत्रादि के अतिरिक्त और कुछ नहीं था। असत्य भाषण का यह भयंकर परिणाम देखकर वह नाव से उतरकर दंडी भगवान् के पास दौड़ गए और उनके चरणों पर गिरकर क्षमा-याचना तथा प्रार्थना करने लगे। जब दोनो अत्यन्त विनीत भाव स प्रार्थना करने लगे ता दंडी वेशधारी भगवान उन्हें असत्य भाषण से दूर रहने की चेतावनी देकर अंतर्धान हो गए। वणिक की नाव पुनः पूर्ववत् रत्नों से भर गई। वे प्रसन्नता से अपने घर की ओर चल पड़े। जिस समय वणिक अपने घर के समीप पहुँचा और माता पुत्री को उनके आने का समाचार मिला, उस समय वे सत्यनारायण के पूजन में निरत थीं। माता ने पुत्री को कथा समाप्त करके आने की बात कही। उसकी कथा समाप्त हो चुकी थी, अत.-स्वयं चली गई। चिरकाल के बाद पति और पिता के आगमन की बात सुनकर पुत्री कलावती इतनी विह्वल हो गई थी कि पूजन समाप्त

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

करके प्रसाद बिना लिए ही उठकर उसी ओर दौड़ पड़ी, जिधर पिता और पति के नाव से आने का मार्ग था। उसके इस अपराध से सत्यदेव भगवान् का कोप पुनः प्रस्फुटित हुआ और कलावती का पति अपनी नाव के साथ ही नदी में डूब गया। यह दुर्घटना देखकर सभी शोक-समुद्र में डूबने-उतराने लगे और कलावती करुण क्रंदन करने लगी। किंतु अब क्या हो सकता था? उस समय की प्रथा के अनुसार कलावती अपने पति की खड़ाऊँ लेकर सती होने की तैयारी में लग गई।

कलावती के माता-पिता को दैव-कोप का पता लग गया। विनीत स्वर में भगवान् से क्षमा-याचना की प्रार्थना करने लगे। उसी समय आकाशवाणी हुई कि - 'तुम्हारी पुत्री ने भगवान् के प्रसाद का अनादर किया है, यदि वह जाकर प्रसाद ग्रहण करके आवे, तो उसका पति उसे मिल सकता है।' कलावती लौटकर गई और बड़ी भक्ति, करुण प्रार्थना तथा क्षमा याचना भाव से प्रसाद लेकर वापस आई। इस बार भगवान की कृपा से उसका पति नदी के तट पर उपस्थित था। सभी परम प्रसन्न हुये और घर आकर पुनः विधि विधान से पूजन किया।

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

३४. पुरुषोत्तम मास

जिस महीने में सूर्य की कोई संक्रान्ति नहीं होती उसे अधिमास, मलमास अथवा पुरुषोत्तम मास कहते हैं। यह प्रत्येक ३२ मास १६ दिन और ४ घड़ी के अनन्तर आता है। इसमें सभी कामना-मूलक शुभ कार्य वर्जित हैं, निष्काम भाव से किये गए यज्ञादि शुभ कार्य किए जा सकते हैं। इसमें सभी पापों को दूर करने वाले व्रतों की भरमार रहती है। प्रायः मलमास का महीना व्रतों के लिए ही माना गया है।

विधि

मलमास के आरम्भ से उसकी समाप्ति तक इस व्रत को करना चाहिये। प्रातःकाल ब्रह्ममुहूर्त में उठकर नित्यकर्म से निवृत्त होकर किसी पुण्यतीर्थ, नदी अथवा सरोवर में स्नान करे। फिर किसी पवित्र स्थान में अक्षत से अष्ट दल कमल बनाकर उस पर जल-पूर्ण कलश की स्थापना करे। उसके ऊपर चावल से भरा पात्र रखकर पीले वस्त्र से ढक दे। फिर राधा-कृष्ण की मूर्ति स्थापना करे षोडशोपचारों से पूजन करे। तदनन्तर सात्त्विक भोजन केवल एक बार रात्रि में करे। फिर श्रीमद्भागवत की कथा सुने तथा सन्ध्या को दीपदान करे। इस प्रकार महीने भर तक व्रत कर लेने के अनन्तर काँसे के पात्र के में तीस पूआ या मिठाइयाँ रखकर सुपात्र को दान करे। इसकी कथा संक्षेप में इस प्रकार है :—

कथा

प्राचीन काल में कन्दर्प नामक का एक बड़ा पापी तथा दुराचारी ब्राह्मण था। उसने जीवन भर में न तो कोई दान

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-
किया न पुण्य। केवल एक बार एक वैश्य को पुरुषोत्तम मास की पूजा देखने का अवसर मिला था। मृत्यु के अनंतर वह कुछ दिनों के लिये प्रेत योनि में गया। तदनंतर उसे बंदर की योनि मिली। उसी एक पुण्य के प्रभाव से उसे इंद्रनिर्मित मृगतीर्थ में रहने का स्थान मिला। किसी कारण-वश इस योनि में उसे पुरुषोत्तम-मास के तीन दिनों तक निराहार रहना पड़ा और अन्त में उसी मृगतीर्थ में उसका शरीरांत भी हुआ।

दीपदान की कथा

पुरुषोत्तम मास में दीपदान की विशेष महिमा है। इस प्रकरण में एक विचित्र कथा दी गई है। प्राचीन काल में सौभाग्य नगर का राजा चित्रभानु परम धार्मिक तथा दयालु था। उसकी रानी चंद्रकला भी परम साध्वी तथा दयालु थी। थी। एक दिन राजा के दरबार में अगस्त्य मुनि पधारे। राजा ने अपनी रानी के साथ उनका स्वागत किया। बातचीत के प्रसंग में उन्होंने मुनि से अपने पूर्वजन्म की कथा पूछी। मुनि त्रिकालदर्शी तो थे ही, उन्होंने राजा को बताया कि वे पूर्वजन्म में मणिग्रीव-नामक शूद्र थे। जीवन भर पाप और हिंसा में लगे रहे। पहली रानी पूर्व जन्म में भी तेरी स्त्री थी, किंतु वह परम पतिव्रता तथा साध्वी थी। एक दिन तेरे घर उग्रदेव-नामक ब्राह्मण देवता आकर टिके, जो मार्ग भूल जाने के कारण बहुत थक गए थे। तुम दोनों प्राणियों ने उनका विधिवत् स्वागत-सत्कार किया और उनसे अपनी विपत्ति दूर करने का उपाय पूछा। ब्राह्मण देवता ने आप दोनों को आगामी पुरुषोत्तम मास में व्रत रखने का और दीपदान करने का उपदेश दिया, जिसके विधिवत् पालन करने व उसके पुण्य-प्रभाव से इस जन्म में राज्य एवं वैभव की प्राप्ति हुई है।

---

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

३५. सोमवती अमावस्या

हिंदू त्योहारों में सोमवती अमावस्या का भी अपना विशिष्ट स्थान है। यह सोमवार को ही पड़ता है। इस तिथि को काशी, प्रयाग, गढ़मुक्तेश्वर आदि धार्मिक स्थानों पर स्त्री-पुरुषों का विशेष जमघट होता है, जो अर्थाभाव से उक्त स्थानों का लाभ नहीं उठा पाते, वे निकटस्थ छोटी नदी व सरोवर पर ही स्नानादि करके व्रत रखते हैं। ऐसा कहा गया है कि इस दिन का व्रत संतान-सुख और धन-सम्पदा के लिये फलदायी होता है। सौभाग्यवती स्त्रियाँ इसे अधिक करती हैं। क्योंकि उनका विश्वास है कि इस व्रत के विधि पूर्वक अनुष्ठान से उनके पति की आयु बढ़ जाती है और असमय में ही वैधव्य से मुक्ति प्राप्त होती है। इसकी विधि निम्न प्रकार है।

विधि

प्रातःकाल उठकर नित्यकर्म से निवृत्त हो किसी नदी अथवा सरोवर में स्नान कर रेशमी वस्त्र धारण करे और हरि-नाम का जप करते हुए पीपल या वट-वृक्ष की जड़ में भगवान् का स्मरण कर विधिवत् पूजन एवं प्रार्थना करे। वृक्ष की १०८ प्रदक्षिणा करे और यथाशक्ति प्रत्येक बार कुछ न कुछ चढ़ाए। प्रदक्षिणा के साथ कच्चे सूत का धागा भी लपेटता जाय। निराहार रह सके तो अत्युत्तम अन्यथा फलाहार करे। प्रदक्षिणा की भी वस्तुएँ तथा कुछ द्रव्य सुपात्र को दे। कथा इस प्रकार है —

कथा

महाभारत-युद्ध की समाप्ति के बाद कुलनाश से दुःखित व

. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

संतप्त पांडव शरशैया पर पड़े भीष्म पितामह के पास गए और उनसे अपनी मनोव्यथा प्रकट की। भीष्म पितामह अत्यंत अनुभवी तथा शास्त्र मरमज्ञ थे। उन्होंने पांडवों को संतति-सुख तथा उनके चिरायु के लिये सोमवती अमावस्या का व्रत रखने का उपदेश दिया और इस प्रसंग में एक कथा सुनाई।

प्राचीन काल में कांचीपुर में रत्नसेन नाम का एक राजा था, जो परम प्रजा वत्सल तथा न्यायी था। उसके राज में देवस्वामी नाम का एक ब्राह्मण रहता था, उनकी पत्नी का नाम धनवती था। ब्राह्मण के सात पुत्र तथा एक गुणवती नाम की कन्या थी। पुत्रों का विवाह तो हो गया, किंतु कोई उपयुक्त वर न मिलने से गुणवती का विवाह न हो सका। एक दिन ब्राह्मण के घर भिक्षा के लिये एक वृद्ध तपस्वी आया। भिक्षा प्राप्ति के अनंतर उसने सभी पुत्र-वधुओं को चिर सौभाग्यवती होने का आशीर्वाद दिया, किंतु पुत्री गुणवती को केवल धर्मवती होने का ही आशीस दिया। ब्राह्मणी धनवती ने उसके इस आशीस का जब रहस्य पूछा, तो तपस्वी ने बताया कि इस कन्या के भाग्य में वैधव्य का योग पड़ा है। विवाह के अवसर पर ही सप्तपदी के बीच ही इसके पति का देहांत हो जायगा। धनवती बड़ी दुःखी हुई। उसने बड़े अनुनय-विनय के बाद तपस्वी से इस दुर्योग से निवृत्ति का उपाय पूछा। तपस्वी ने कहा—"सिंहल देश में सोमा नाम की एक धोबिन है, वह इस संबंध में विशेष जानकारी रखती है। कदाचित् वह कोई उपाय बता सके।"

ब्राह्मणी ने अपने पुत्रों से सिंहल देश जाकर सोमा धोबिन को ले आने को कहा, किंतु बहुत दूर और दुर्गम प्रदेश होने के कारण सिंहल द्वीप जाने की हिम्मत किसी पुत्र की नहीं हुई।

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

तब देवस्वामी स्वयं सिंहल जाने को तैयार हो गए, क्योंकि अन्य कोई उपाय न था। यह देख संकोच-वश सबसे छोटा पुत्र शिवस्वामी सिंहल जाने को तैयार हो गया। यह सोचकर कि कदाचित् सोमा यहाँ न आना चाहे, तो उसने अपनी बहन को भी साथ ले लिया। नाव में बैठकर दोनों भाई-बहन सिंहल की ओर चल पड़े। नदी का मार्ग समाप्त करके जब समुद्र-तट पर उनकी नाव पहुँची, तो समुद्र की भयंकर लहरें और तूफ़ान देखकर उस पार जाने का उनका साहस जवाब दे गया। समुद्र-तट पर ही एक विशाल वट-वृक्ष था। उसी में नाव बाँध कर भाई-बहन उदास होकर बैठ गए। उस वट-वृक्ष पर एक गृद्धराज रहता था। उसके कई छोटे-छोटे बच्चे थे। गृद्धराज जब बाहर से उनके खिलाने का चारा लेकर आया और उन्हें खिलाने लगा, तो उन सबों ने एक स्वर से खाना अस्वीकार कर दिया और बोले जब तक अतिथि-रूप में अपने आश्रय में आए हुए ये दोनों प्राणी कुछ खा-पी नहीं लेते, तब तक हम लोगों को भी कुछ खाना-पीना न चाहिए। गृद्धराज ने नीचे उतरकर उन दोनों प्राणियों से उनकी उदासी का कारण पूछा। शिवस्वामी ने अपनी सारा गाथा उससे कह सुनाई। गृद्धराज का हृदय सहानुभूति से भर गया, उसने उन्हें समुद्र पार कराने का आश्वासन दिया और उन्हें कुछ खाने-पीने को सहमत किया। खा-पी लेने पर गृद्धराज ने उन दोनों भाई-बहनों को सोमा के घर पहुँचा दिया। वहाँ पहुँचकर उन दोनों ने अपनी सेवा और निष्ठा से सोमा को प्रसन्न किया और उसे अपने साथ कांचीपुर आने पर सहमत कर लिया। सोमा परम पुण्यवती स्त्री थी। अपने तप के तेज से वह इन दोनो को साथ लेकर कांचीपुरी आ गई और आते ही उज्जयिनी के रुद्रशर्मा नामक युवक ब्राह्मण के संग शुभ मुहूर्त में गुणवती

. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

का विवाह तय कराया। विवाह के अवसर पर ही सप्तपदी के बीच रुद्र शर्मा की मृत्यु हो गई। किन्तु उसी क्षण सोमा ने अपने समस्त सुकृतों के फल से रुद्र शर्मा को जीवित कर दिया। पूछे जाने पर सोमा ने बताया कि यह सारा पुण्य अनेक सोमवती अमावस्या के व्रत रखने से संचित हुए थे। जिसके प्रभाव से वह रुद्र शर्मा को पुनः जीवित करने में समर्थ हो सकी। उसने गुणवती को विधि-विधान से इस व्रत के पालन करने का उपदेश दिया और अपने स्थान को वापस चली गई।

भीष्म पितामह से सोमवती अमावस्या-व्रत का अनुष्ठान समझ कर पांडवों ने अंत काल तक विधिवत् पालन किया, जिससे उनके वंशज चिरायु होकर सदैव सुखी रहे।

---

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025

३६. कुम्भ-पर्व

समस्त भारत में हिंदुओं का यह सबसे बड़ा और पुण्य-दायिनी पर्व माना गया है। यह १२ वर्ष बाद पड़ता है। इसके लिये प्रयाग, हरिद्वार, नासिक और उज्जैन स्थान निर्दिष्ट हैं। जैसा योग हो उसी प्रकार इन स्थानों पर क्रमशः कुम्भ पर्व पड़ता है, किन्तु प्रयाग और हरिद्वार में पड़े कुम्भ को अधिक मान्यता मिली हुई है। महीनों पहिले से धर्मनिष्ठ व्यक्ति गंगा किनारे झोपड़ी बनवाकर कल्पवास करते हैं। लाखों स्नानार्थी इस अवसर पर संगम-स्नान करते हैं। समस्त भारत के कोने-कोने से जन-समुदाय सागर की लहरों की भाँति उमड़ पड़ता है। उनका विश्वास है, कुम्भ-पर्व के अवसर का स्नान जन्म-जन्मांतर के पापों को धो डालता है। इसका भी एक कारण है। समुद्र-मंथन के समय अमृत-घट निकलने पर देवासुरों में छीना-झपटी के फल-स्वरूप घट की कुछ छीटें उन चारों स्थानों पर छलक गइ थी, जिसका प्रभाव इस अवसर के स्नान पर व्यक्ति के मनोभाव और शरीर पर अप्रत्यक्ष रूप से होता है।

कुम्भ हमारे विशाल देश का प्राचीनतम पर्व है। इसकी विशालता और प्राचीनता का प्रमाण हमारे धर्म-ग्रन्थों में मिलता है। वेदों से उद्धृत कतिपय मन्त्र जो इसकी महानता के साक्षी हैं दिए जाते हैं:—

जघान वृत्रं स्वधितिर्वनेव रुरोज पुरो अरदन्न सिन्धून।
विभेद गिरिं नवभिन्नकुम्भ भागा इन्द्रो अकृणुता स्वयुग्भि.॥
(ऋग्वेद १०।८९।७)

कुम्भी वेद्यां मा व्यथिष्ठा यज्ञायुधैराज्येनातिषिक्ता।
(ऋग्वेद १२।३।२३)

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

कुम्भो बनिष्टुर्जनिता शचीभि यस्मिन्नग्रे योन्यां गर्भोऽ अन्तः।
प्लाशिर्व्यक्तः शतधारऽउत्सो दुहे न कुम्भी स्वधां पितृभ्यः॥
(शुक्ल यजुर्वेद १९।८७)

पूर्णः कुम्भोऽधिकाल अहितस्तं वै पश्यामो बहुधानु संतः।
स इमा विश्वा भुवनानि कालं तमाहु परमे व्योमन॥
(अथर्ववेद १९।५३।३)

उपर्युक्त मन्त्रों में कुम्भ शब्द का 'कुम्भ-पर्व' अर्थ सम्प्रदाय के अनुरोध से किया गया है। अथर्ववेद के एक मन्त्र में कुम्भ के चार भेदों का भी उल्लेख है।

चतुरः कुम्भाश्चतुर्धा ददामि (अथर्ववेद ४।३४।७)

वेदों में कुम्भ-पर्व अथवा कुम्भ की चर्चा केवल उसके उल्लेख से ही मिलती है। किन्तु पुराणों तथा अन्य धार्मिक ग्रंथों में कुम्भ पर्व की एक विचित्र कथा मिलती है, जो इस प्रकार है—

कथा

एक समय की बात है, जब असुरों और देवताओं में कोई लड़ाई - झगड़ा न था, परस्पर सुमति थी। दोनों दलों के प्रमुख लोगों ने एक जगह बैठकर यह विचार किया कि पृथ्वी का कोना-कोना तो हम लोगों ने छान डाला, अब ऐसी कोई सुंदर चीज बाकी नहीं है, जिसे हम लोग न प्राप्त कर सके हों, किन्तु भूमण्डल के चारों ओर घेरनेवाले समुद्र का पता हमें नहीं कि इसमें क्या-क्या छिपा हुआ है? पण्डित लोग इसे रत्नाकर कहते हैं, इसमें छिपे हुए अमूल्य रत्नों को हस्तगत किए बिना हमारी शक्ति व्यर्थ है। सबसे बढ़कर मूल्यवान् पदार्थ जो इस महासागर के गर्भ में है, वह है 'अमृत' जिसे पीने पर मृत्यु तथा बुढ़ापे का भय जाता

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0
रहता है। इस लिये उस सब श्रेष्ठ पदार्थ को प्राप्त करना ही चाहिए। बात दोनों को जँच गई। युक्तियाँ सोची गयीं और तुरन्त ही उन्हें कार्यान्वित किया गया। समीपवर्ती मन्दराचल को मथानी बनाकर, सर्पों के राजा वासुकि को रस्सी के रूप में प्रयुक्त करने को सहमत कर लिया गया।

समुद्र-मंथन आरंभ हो गया। अनेक नवरत्नों के सहित अमृत-घट का भी प्रादुर्भाव हुआ। अमृत का कलश ज्यों ही समुद्र की क्षुधित जलराशि से बाहर हुआ, देव और असुर हर्ष से उन्मत्त हो उठे। अमृत को प्राप्त करने की टोह में वे आपस में उलझ गए और कलश ले लेने की चेष्टा करने लगे।

देवता नागराज वासुकि की पूँछ की तरफ थे और असुर फण पकड़े हुए थे। देवराज इन्द्र की कूट बुद्धि ने तुरंत चमत्कार दिखलाया। अपने युवा-पुत्र जयन्त को उन्होंने इशारा किया कि—तुम कलश लेकर फौरन यहाँ से भाग जाओ और मैं सदल बल असुरों के साथ यहाँ युद्ध छेड़ दूंगा। जयन्त देवराज का पुत्र असुरों की चंचल आँखों के सामने ही अमृत के मंगलमय कलश को उठाकर बड़ी तेजी से ऐसा भागा कि उस भीड़ में यह जानना भी कठिन हो गया कि वह किस ओर गया।

असुरों में कुहराम मच गया। उनकी सारी चेतना लुप्त हो गई। तुरन्त युद्ध छेड़ने की क्षमता भी उनमें न थी क्योंकि सबके सब निहत्थे और निरुपाय थे ऐसी दशा में वे अपने सर्वज्ञ गुरू शुक्राचार्य की शरण में पहुँचे। उन्हें द्रवित करते हुए असुरों ने अपनी मनोव्यथा उनसे कही और इस संकट से उद्धार का उपाय पूछा। आचार्य शुक्र ने थोड़ी देर

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

तक ध्यानावस्थित होकर अपने शिष्यों से कहा—"मेरे प्यारे शिष्यों ! उस अमृत कलश को लेकर इन्द्र का पुत्र जयन्त पूर्व दिशा की ओर भागा जा रहा है। दौड़ो, और उससे बल-पूर्वक कलश छीन लो। अब भी वह दौड़कर पकड़ा जा सकता है।"

शारीरिक शक्ति में असुर बड़े प्रचंड थे। पूर्व दिशा की ओर पवन-वेग से दौड़ते हुए उन्होंने जयंत को ललकारा, किंतु देवतागण भी चुप नहीं बैठे थे। उन्होंने असुरों का पीछा किया और फिर दोनो का तुमुल युद्ध भूमण्डल पर जोरों से मच गया और अमृत कलश को लेकर भाग-दौड़ होती रही।

पुराणों का कथन है कि यह युद्ध बारह दिनों तक चला। देवताओं का बारह दिन मनुष्यों का बारह वर्ष होता है। इन बारह दिनों में चार स्थानों पर चार दैत्यों ने जयंत को पकड़कर अमृत कलश छीनने का निष्फल प्रयास किया। सूर्य, चन्द्र, और बृहस्पति ने जयंत की मदद की और प्रत्येक बार कलश छिन जाने से बचता रहा। किंतु इस छीना-झपटी में अमृत कलश से अमृत की कुछ बूदें छलक कर धरती पर गिर पड़ीं। ये चारों स्थान जहाँ अमृत की बूँदें कलश से छलकी थीं, ये ही थे, जहां आज का कुम्भ पर्व लगता है। अर्थात् प्रयाग, हरिद्वार, गोदावरी (नासिक) और अवन्तिका (उज्जैन)। कलश की रक्षा में उक्त तीनो देवताओं ने अलग-अलग सहायता की थी। सूर्य ने कलश को फूटने से, गुरु बृहस्पति ने दैत्यों के हाथों में जाने से तथा चन्द्रमा ने छलकने से। अतएव कुम्भ पर्व में इन तीनों देवताओं (ग्रहों) की ही मुख्य स्थिति है।

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

३७. आवाहन-पूजनादि के मंत्र

व्रती को चाहिए कि जिस देवता के निमित्त व्रत रक्खे उसी के नाम का जप, उसी के उद्देश्य से यज्ञ, उसी की पुण्य कथाओं को सुने व सुनावे। प्रार्थना सच्चे हृदय व पूर्ण निष्ठा-पूर्वक होनी चाहिए हृदय में यह दृढ़ विश्वास होना चाहिए कि जिस आशा से व्रत किया जाय, वह अवश्य पूर्ण होगा। इस अवसर पर देवताओं को अर्पित ऋतु-संबंधी फल, वस्त्र आदि वस्तुएँ किसी सत्पात्र को ही दान करना चाहिए व्रतों के आवश्यक आवाहन पूजनादि के कतिपय मंत्र हम नीचे दे रहे हैं। इन्हें आवश्यकतानुसार कंठस्थ कर लेना चाहिये।

आवाहन का मंत्र

आगच्छ देव देवेश तेजोराशे जगत्पते।
क्रियमाणां मया पूजां गृहाण सुरसत्तम॥

आसन देने का

नानारत्नसमायुक्तं कार्तस्वरविभूषितम्।
आसनं देवदेवेश प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यताम्॥

पाद्य देने का

पाद्यं गृहाण देवेश सर्वक्षेमकर प्रभो।
भक्त्या समर्पितं देव लोकनाथ नमोस्तुते॥

अर्घ्य देने का

नमस्ते देव देवेश नमस्ते धरणीधर।
नमस्ते जगदाधार अर्घ्यं नः प्रतिगृह्यताम्॥

आचमन का

कर्पूरवासितं तोयं मन्दाकिन्याः समाहृतम्।
आचम्यतां जगन्नाथ! मया दत्तं हि भक्तितः॥

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

पंचामृत में स्नान कराने का

शर्करारससंयुक्तं पयोदधि घृतं मधु।
पंचामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

शुद्ध जल में स्नान कराने का

तोयमेतत्सुखस्पर्शं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।

वस्त्र चढ़ाने का

सर्वभूषादिकं देव! लोकलज्जानिवारणे।
मयोपपादिते तुभ्यं वाससी प्रतिगृह्यताम्॥

यज्ञोपवीत चढ़ाने का

देव देव नमस्तेऽस्तु त्राहि मां भवसागरात्।
ब्रह्मसूत्रं सोत्तरीयं गृहाण पुरुषोत्तम॥

चन्दन लगाने का

श्री खण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ! प्रत्यर्थं प्रतिगृह्यताम्॥

माला चढ़ाने का

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभुः।
मयाहृतानि पुष्पाणि प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यताम्॥

धूप करने का

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥

दीपदान करने का

साज्यं च वर्तिसंयुक्त वह्निना योजितं मया।
दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापह।

नैवेद्य चढ़ाने का

अन्नं चतुर्विधं स्वादु रसैः षड्भिः समन्वितम्।
भक्ष्यभोज्यसमायुक्तं नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्॥

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-0

३७. आवाहन-पूजनादि के मंत्र

व्रती को चाहिए कि जिस देवता के निमित्त व्रत रक्खे उसी के नाम का जप, उसी के उद्देश्य से यज्ञ, उसी की पुण्य कथाओं को सुने व सुनावे। प्रार्थना सच्चे हृदय व पूर्ण निष्ठा-पूर्वक होनी चाहिए हृदय में यह दृढ़ विश्वास होना चाहिए कि जिस आशा से व्रत किया जाय, वह अवश्य पूर्ण होगा। इस अवसर पर देवताओं को अर्पित ऋतु-संबंधी फल, वस्त्र आदि वस्तुएँ किसी सत्पात्र को ही दान करना चाहिए व्रतों के आवश्यक आवाहन पूजनादि के कतिपय मंत्र हम नीचे दे रहे हैं। इन्हें आवश्यकतानुसार कंठस्थ कर लेना चाहिये।

आवाहन का मंत्र

आगच्छ देव देवेश तेजोराशे जगत्पते।
क्रियमाणां मया पूजां गृहाण सुरसत्तम॥

आसन देने का

नानारत्नसमायुक्तं कार्तस्वरविभूषितम्।
आसनं देवदेवेश प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यताम्॥

पाद्य देने का

पाद्यं गृहाण देवेश सर्वक्षेमकर प्रभो।
भक्त्या समर्पितं देव लोकनाथ नमोस्तुते॥

अर्घ्य देने का

नमस्ते देव देवेश नमस्ते धरणीधर।
नमस्ते जगदाधार अर्घ्यं नः प्रतिगृह्यताम्॥

आचमन का

कर्पूरवासितं तोयं मन्दाकिन्याः समाहृतम्।
आचम्यतां जगन्नाथ! मया दत्तं हि भक्तितः॥

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-

पंचामृत में स्नान कराने का

शर्करारससंयुक्तं पयोदधि घृतं मधु।
पंचामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

शुद्ध जल में स्नान कराने का

तोयमेतत्सुखस्पर्शं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।

वस्त्र चढ़ाने का

सर्वभूषादिकं देव! लोकलज्जानिवारणे।
मयोपपादिते तुभ्यं वाससी प्रतिगृह्यताम्॥

यज्ञोपवीत चढ़ाने का

देव देव नमस्तेऽस्तु त्राहि मां भवसागरात्।
ब्रह्मसूत्रं सोत्तरीयं गृहाण पुरुषोत्तम॥

चन्दन लगाने का

श्री खण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ! प्रत्यर्थं प्रतिगृह्यताम्॥

माला चढ़ाने का

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभुः।
मयाहृतानि पुष्पाणि प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यताम्॥

धूप करने का

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥

दीपदान करने का

साज्यं च वर्तिसंयुक्त वह्निना योजितं मया।
दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापह।

नैवेद्य चढ़ाने का

अन्नं चतुर्विधं स्वादु रसैः षड्भिः समन्वितम्।
भक्ष्यभोज्यसमायुक्तं नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्॥

0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-C

फल चढ़ाने का

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव ।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनिजन्मनि ॥

तांबूल चढ़ाने का

पूगीफलसमायुक्तं नागबल्लीदलैर्युतम् ।
कर्पूरैलासलायुक्तं तांबूलं प्रतिगृह्यताम् ॥

दक्षिणा चढ़ाने का

हिरण्यगर्भ हस्तस्थं हेमबीजं विभावसोः ।
अनन्तपुण्यफलदमतः शान्ति प्रयच्छ मे ॥

नीराजन करने का

चन्द्रादित्यौ च धरणी विद्युदग्निस्थैव च ।
त्वमेव सर्वं ज्योतींषि आर्तिक्यं प्रतिगृह्यताम् ॥

पुष्पांजलि लेकर प्रार्थना करने का

नमस्ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते ह्यमरप्रिय ।
नमस्ते जगदानन्द देवदेव नमोऽस्तुते ॥

प्रदक्षिणा करने का

यानि यानि च पापानि ब्रह्महत्यासमानि च ।
तानि तानि विनश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे ॥

नमस्कार करने का

नमः सर्वहितार्थाय जगदाधारहेतवे ।
साष्टांगोऽयं प्रणामस्ते प्रयत्नेन मया कृतः ॥

. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-